इकाई–2

शैक्षणिक विश्लेषण
PEDAGOGICAL ANALYSIS

शैक्षणिक विश्लेषण (PEDAGOGICAL ANALYSIS)

प्रश्न 1– शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण की प्रक्रिया को विस्तारपूर्वक बताइए।
Explain the procedure of pedagogical analysis in detail. [(16) June 2016, MDU Rohtak]

या

शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण का अर्थ।
Meaning of Pedagogical Analysis.
[(4) June 2016, MDU Rohtak]

या

शैक्षणिक विश्लेषण का अर्थ स्पष्ट कीजिए एवं विषयवस्तु विश्लेषण तथा शैक्षणिक विश्लेषण में अन्तर बताइए।
Explain the meaning of pedagogical analysis and write difference between content analysis and pedagogical analysis.

उत्तर– शैक्षणिक विश्लेषण का अर्थ (Meaning of Pedagogical Analysis)
शाब्दिक अर्थ में शैक्षणिक विश्लेषण दो शब्दों से मिलकर बना हैं शिक्षाशास्त्र व विश्लेषण (शिक्षाशास्त्र + विश्लेषण)। सरलरूप में कहा जाए तो शैक्षणिक विश्लेषण उस विश्लेषण को कहते हैं जो शिक्षाशास्त्र पर आधारित हो। विश्लेषण का अर्थ उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा सम्पूर्ण विषयवस्तु को उसके अनेक तत्वों, भागों या अवयवों में विभक्त (विभाजित) किया जाता हैं। परिभाषा के रूप में शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण को हम इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं–

"किसी भी विषय विशेष को विषयवस्तु का शिक्षण विज्ञान अथवा शिक्षाशास्त्र के नियमों के आधार पर किया जाने वाला विश्लेषण ही उस विषय–विशेष की विषयवस्तु का शैक्षणिक विश्लेषण कहलाता है।"

शैक्षणिक विश्लेषण के सोपान व क्रियाएँ (Steps and Process of Pedagogical Analysis)
शैक्षणिक विश्लेषण के कार्य में जैविक विज्ञान अध्यापक द्वारा अपने विषय की विषय–वस्तु के शैक्षणिक विश्लेषण हेतु सोपान व सक्रियाएँ निम्नवत् हैं–

1) जीव विज्ञानों की विषय–वस्तु की किसी इकाई या प्रकरण या एकल सम्प्रत्यय (जिनका अनुदेशन किया जाता है) के विषय–वस्तु का विश्लेषण।
2) प्रस्तुत प्रकरण (विषय–वस्तु) के शिक्षण अधिगम हेतु उचित अनुदेशनात्मक उद्देश्यों का निर्माण।
3) निर्धारित अनुदेशात्मक उद्देश्य की प्राप्ति के सन्दर्भ में शिक्षण अधिगम में सहायक शिक्षण विधियाँ, प्रविधियाँ तकनीक, व्यूह रचनाएँ, शिक्षण अधिगम क्रियाओं व शिक्षण सहायक सामग्री आदि का चयन।
4) प्रस्तुत प्रकरण की शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के मूल्यांकन की तकनीकों का उल्लेख करना।

शैक्षणिक विश्लेषण प्रक्रिया के सोपान पर जो भी सक्रियाएँ अपेक्षित होती है उनमें परस्पर अन्तःनिर्भरता व अन्तःसम्बन्ध पाया जाता है। इसे इस चित्र की सहायता से समझा जा सकता है–

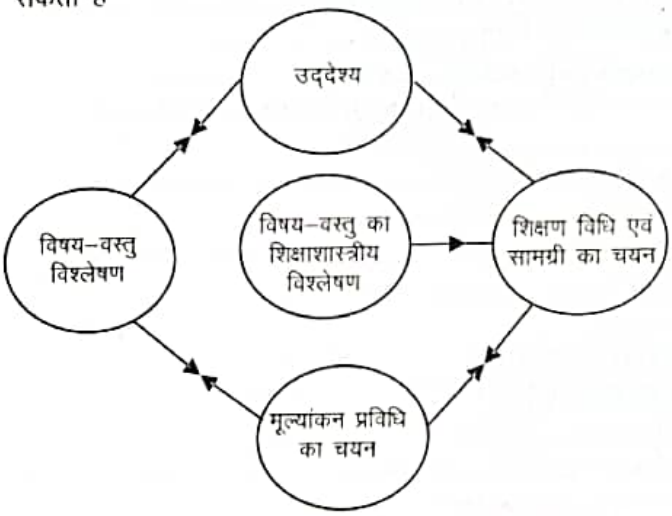

शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण के सोपान एवं संक्रियाएँ

शैक्षणिक विश्लेषण का महत्व (Importance of Pedagogical Analysis)
शैक्षणिक विश्लेषण का महत्व इस प्रकार हैं–

1) शैक्षणिक विश्लेषण में शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण शिक्षकों द्वारा कर लिया जाता है। उद्देश्यों के निर्धारण के बाद शिक्षण प्रक्रिया सुचारू रूप से संचालित हो सकती है।
2) शिक्षक उद्देश्यों के निर्धारण के पश्चात् छात्रों को पढ़ाने के लिए शिक्षकों द्वारा उनकी व्यक्तिगत भिन्नताओं का ध्यान रखा जाता है।

Scanned with OKEN Scanner

3) शिक्षक शिक्षण उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए समुचित विधियों एवं प्रविधियों व पाठ से सम्बन्धित सहायक सामग्री का प्रयोग करता है जो पाठ को सरल व रोचक बना देता है।

4) शिक्षक पढ़ाई जाने वाली विषय–वस्तु की इकाई, प्रकरण, सम्प्रत्यय आदि का शैक्षणिक विश्लेषण करते हैं।

5) शैक्षिक विश्लेषण के अन्तर्गत अनुदेशात्मक उद्देश्यों का चयन तथा उसे व्यावहारिक पदों के रूप में लिखा जाता है।

6) निर्धारित अनुदेशनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विधियों, प्रविधियों, तकनीकों, व्यूह रचनाओं, शिक्षण अधिगम क्रियाओं एवं सहायक सामग्री आदि का चयन किया जाता है।

7) अन्त में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की सफलता की जाँच हेतु मूल्यांकन प्रविधियों का विश्लेषण किया जाता है।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि जब जैविक विज्ञान के अध्यापन में विधिपूर्वक एवं वैज्ञानिक तरीके से विभाजन किया जाता है तब यह विषय के अंगों का शिक्षण शास्त्रीय विश्लेषण करता है।

विषयवस्तु विश्लेषण तथा शैक्षणिक विश्लेषण में अन्तर (Difference between Content Analysis and Pedagogical Analysis)

विद्यालय पाठ्यचर्या में शामिल किसी विषय विशेष के लिए जो पाठ्यक्रम (Syllabus) निर्धारित किया जाता है तो यह प्रयास किया जाता है कि उसके माध्यम से अधिगम परिणाम या अपेक्षित व्यावहारिक परिवर्तन सरलतापूर्वक प्राप्त किए जा सकें। अतः यह स्वयं ध्यान रखा जाता है कि पाठ्य वस्तु को दीर्घ (Major) व लघु (Minor) खण्डों, वृहत तथा लघु सम्प्रत्यय (Major and Minor Concepts), इकाइयाँ (Units), प्रकरणों (Topics) तथा एक सम्प्रत्ययों (Single Concepts) के रूप में क्रमिक रूप से सुव्यवस्थित कर लिया जाए। जब शिक्षक को किसी प्रकरण को पढ़ाना होता है तो वह उस प्रकरण को अपनी सुविधानुसार उप–इकाइयों, उप–प्रकरणों या एकल सम्प्रत्ययों में विभक्त करके सुव्यवस्थित व संगठित कर लेता है। यह प्रक्रिया वस्तु विश्लेषण (Content Analysis) कहलाती है। कुछ लोग इसे शिक्षण बिन्दुओं का निर्धारण भी कहते हैं। इसके विपरीत जब विषय–वस्तु का विश्लेषण एक विधिवत् ढंग से शिक्षण विज्ञान की मान्यताओं तथा सिद्धान्तों को आधार बनाकर किया जाता है तो उसे विषय–वस्तु विशेष का शिक्षा शास्त्रीय विश्लेषण कहा जाता है।

प्रकाश–संश्लेषण (PHOTOSYNTHESIS)

प्रश्न 2– प्रकाश संश्लेषण के शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण को स्पष्ट कीजिए।

Explain pedagogical analysis of "Photosynthesis".

[(16) June 2016, MDU Rohtak]

या

प्रकाश संश्लेषण किसे कहते है? प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया का उल्लेख कीजिए।

What is photosynthesis? Describe the photosynthesis process.

या

प्रकाश संश्लेषण का अर्थ बताइए तथा प्रकाश संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारक एवं महत्व का वर्णन कीजिए।

Explain the meaning of photosynthesis and describe the factors affecting photosynthesis and its importance.

उत्तर– प्रकास संश्लेषण पौधों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण किया होती है। क्लोरोफिल हरे रंग का वर्णक होता है। क्लोरोफिल में कम से कम चार वर्णक पाए जाते हैं– दोहरे वर्णक, क्लोरोफिल–ए और क्लोरोफिल–बी और दो पीले वर्णक, कैरोटिन और जैंथोफिल। इनका संश्लेषण पौधों में सूर्य के प्रकाश द्वारा होता है। क्लोरोफिल पौधों में उपस्थित क्लोरोप्लास्ट हरितलवक (Chloroplast) में रहता है। क्लोरोफिल में प्रकाश अवशोषण करने की क्षमता होती है। क्लोरोफिल में प्रकाश ऊर्जा का अवशोषण करने की क्षमता होती है। प्रकाश संश्लेषण का यही आधार है। यदि यह क्षमता नहीं होती तो प्रकाश संश्लेषण संभव नहीं होता। पौधों के पत्तों में क्लोरोफिल के अतिरिक्त कुछ अन्य वर्णक भी रहते हैं जो प्रकाश संश्लेषण में क्लोरोफिल के सहायक होते हैं।

प्रकाश संश्लेषण का अर्थ (Meaning of Photosynthesis)

हरी पत्तियाँ, प्रकाश संश्लेषण के लिए प्रधान अंग हैं। सजीव कोशिकाओं के द्वारा प्रकाशीय ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित करने की क्रिया को प्रकाश संश्लेषण (फोटोसिन्थेसिस) कहते है। प्रकाश संश्लेषण वह क्रिया है जिसमें पौधे अपने हरे रंग वाले अंगों जैसे पत्ती, द्वारा सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में वायु से कार्बन डाईऑक्साइड तथा भूमि से जल लेकर जटिल कार्बनिक खाद्य पदार्थों जैसे कार्बोहाइड्रेट्स का निर्माण करते हैं तथा आक्सीजन गैस (O_2) बाहर निकालते हैं।

प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में पौधों की हरी पत्तियों की कोशिकाओं के अन्दर कार्बन डाईआक्साइड और पानी के संयोग से पहले साधारण कार्बोहाइड्रेट और बाद में जटिल कार्बोहाइड्रेट का निर्माण होता है। इस प्रक्रिया में आक्सीजन एवं ऊर्जा से भरपूर कार्बोहाइड्रेट (सूक्रोज, ग्लूकोज, स्टार्च (मंड) आदि) का निर्माण होता है तथा आक्सीजन गैस बाहर निकलती है। जल, कार्बन डाईऑक्साइड, सूर्य का प्रकाश तथा क्लोरोफिल (हरितलवक) को प्रकाश संश्लेषण का अवयव कहते हैं।

प्रकाश संश्लेषण वह प्रक्रिया है जिसमें प्रकाश ऊर्जा रासायनिक ऊर्जा में बदल जाती है। प्रकाश की ऊर्जा का प्रयोग करके कार्बन डाइऑक्साइड और पानी से शर्करा जैसे कार्बोहाइड्रेट का संश्लेषण होता हैं।

फोटोसिन्थेसिस (प्रकाश संश्लेषण) शब्द–ग्रीक शब्द 'फोटो' यानि 'प्रकाश' और सिंथेसिस यानि संश्लेषण जिसका मतलब 'एक साथ रखना' होता है से लिया गया है। अपशिष्ट उत्पाद

Scanned with OKEN Scanner

के रूप में आक्सीजन भी मुक्त होती है। प्रकाश संश्लेषण होने के लिए प्रकाश सबसे प्रमुख कारक है।

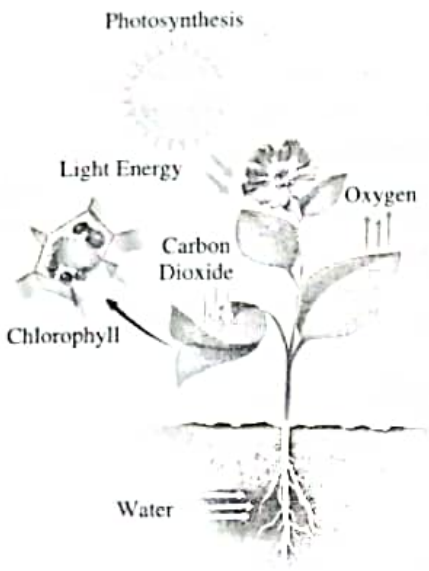

चित्र 2.1– प्रकाश संश्लेषण

प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया (Process of Photosynthesis)

प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया तब होती है जब हरे पौधे प्रकाश की ऊर्जा का प्रयोग कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) और पानी (H_2O) को कार्बोहाइड्रेट में बदलने के लिए करते हैं। पौधे के प्रकाश संश्लेषक वर्णक एवं क्लोरोफिल द्वारा प्रकाश ऊर्जा का अवशोषण किया जाता है जबकि कार्बन डाईऑक्साइड और ऑक्सीजन से युक्त हवा पत्तियों के स्टोमेटा के माध्यम से होकर पौधे में प्रवेश करती है। प्रकाश संश्लेषण का एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण उप–उत्पाद ऑक्सीजन है। अधिकांश सजीव इस पर निर्भर होते हैं।

प्रकाश संश्लेषण के दौरान बनने वाले कार्बोहाइड्रेट एवं ग्लूकोज का पौधों द्वारा ज्यादातर पत्तियां, फूल, फल और बीज का निर्माण करने के लिए ऊर्जा स्रोत के रूप में प्रयोग किया जाता है। ग्लूकोज के अणु आगे चलकर स्टार्च एवं सेल्यूलोज जैसे अधिक जटिल कार्बोहाइड्रेटों का निर्माण करने के लिए एक–दूसरे के साथ जुड़ते हैं। सेल्यूलोज पौधे की कोशिका की दीवारों के लिए प्रयोग होने वाला संरचनात्मक पदार्थ है। प्रकाश संश्लेषण लगभग सभी सजीवों के लिए आधारभूत ऊर्जा स्रोत प्रदान करता है।

हम प्रकाश संश्लेषण की समग्र प्रतिक्रिया को इस प्रकार व्यक्त कर सकते हैं:

Carbon dioxide + Water (+Light energy) → Glucose + Oxygen

$$6CO_2 + 6H_2O \text{ (+Light energy)} \rightarrow C_6H_{12}O_6 + 6O_2$$

प्रकाश संश्लेषण मुख्य रूप से पत्तियों में होता है और न के बराबर तने में होता है। यह क्लोरोप्लास्ट नामक विशेष कोशिका संरचनाओं के भीतर होता है। पत्तियों में वृन्त (पेटियोल) या डंठल और पत्तियों का समतल भाग पटल (लैमिना) होता है क्योंकि इसका क्षेत्र चौड़ा होता है, पटल (लैमिना) प्रकाश संश्लेषण के दौरान सूर्य का प्रकाश और कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण करने में मदद करता है। प्रकाश संश्लेषण क्लोरोप्लास्ट में होता है। इसमें क्लोरोफिल विद्यमान होता है। क्लोरोफिल सूर्य के प्रकाश से ऊर्जा का अवशोषण करता है। पत्तियों में स्टोमेटा नामक छोटे छिद्र होते हैं। यह पौधों में कार्बन डाइऑक्साइड के प्रवेश के लिए और ऑक्सीजन के निकलने के लिए मार्ग का काम करता है।

पौधे प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया के लिए प्रकाश के केवल कुछ रंगों का प्रयोग करते हैं। क्लोरोफिल, नीले, लाल और बैंगनी प्रकाश किरणों को अवशोषित कर लेता। प्रकाश संश्लेषण प्रकाश की नीली तथा लाल किरणों में ज्यादा होता तथा हरे प्रकाश किरणों में कम या नहीं ही होता है।

अवशोषित प्रकाश में सबसे अच्छा रंग नीला होता है इसलिए यह प्रकाश संश्लेषण की उच्चतम दर का प्रदर्शन करता है। इसके बाद लाल प्रकाश आता है। पौधे हरा प्रकाश नहीं अवशोषित कर पाते और इस प्रकार इसका इस्तेमाल प्रकाश संश्लेषण के लिए नहीं हो सकता है। क्लोरोफिल हरा दिखता है क्योंकि यह लाल और नीले प्रकाश को अवशोषित कर लेता है तथा हमारी आँखों के लिए इन रंगों को उपलब्ध नहीं कराता है। हरे रंग का प्रकाश अवशोषित नहीं होता है। यही अन्ततः हमारी आँखों तक पहुँचता है और इससे क्लोरोफिल हरे रंग का दिखाई देता है।

प्रकाश संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारक

प्रकाश संश्लेषण की स्थिर दर के लिए, आदर्श स्तर पर अलग–अलग कारकों की जरूरत होती है। यहाँ प्रकाश संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कुछ कारक दिए जा रहे हैं। प्रकाश संश्लेषण को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक इस प्रकार हैं–

1) प्रकाश की बढ़ी हुई तीव्रता से प्रकाश संश्लेषण की दर ज्यादा हो जाती है और प्रकाश की कम तीव्रता का मतलब प्रकाश संश्लेषण की कम दर होती है।
2) CO_2 की सान्द्रता ज्यादा होने से प्रकाश संश्लेषण की दर बढ़ जाती है। कार्बन डाई–ऑक्साइड की आमतौर पर 0.03–0.04 प्रतिशत सांद्रता प्रकाश संश्लेषण के लिए पर्याप्त होती हैं।
3) समुचित प्रकाश संश्लेषण के लिए 25 से 35°C के बीच के अनुकूल तापमान रेंज की जरूरत होती है।
4) पानी प्रकाश संश्लेषण का अनिवार्य पहलू है। पानी की कमी से कार्बन डाइऑक्साइड ग्रहण करने में समस्या होती है। अगर पानी कम होता है, तो पत्तियाँ अन्दर भण्डारित पानी बचाए रखने के लिए अपना स्टोमेटा नहीं खोलती हैं।
5) प्रदूषित वातावरण पत्तियों पर जम जाते हैं और स्टोमेटा को बन्द कर देते (अशुद्ध कार्बनप्रदूषक और गैसें) हैं। इसमे कार्बन डाइऑक्साइड ग्रहण करना मुश्किल हो जाता है। प्रदूषित वातावरण से प्रकाश संश्लेषण की दर में 15 प्रतिशत तक की कमी आ सकती हैं।

महत्व (Importance)

हरे पौधों में होने वाली प्रकाश संश्लेषण की क्रिया पौधों एवं अन्य जीवित प्राणियों के लिए एक बहुत ही महत्वपूर्ण क्रिया है। इस क्रिया में पौधे सूर्य के प्रकाशीय ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित कर देते हैं तथा CO_2 पानी जैसे साधारण पदार्थों से जटिल कार्बन यौगिक कार्बोहाइड्रेट्स बन जाते हैं। इन

Scanned with OKEN Scanner

कार्बोहाइड्रेट्स द्वारा ही मनुष्य एवं जीवित प्राणियों को भोजन प्राप्त होता है। इस प्रकार पौधे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा सम्पूर्ण प्राणी जगत के लिए भोजन–व्यवस्था करते हैं। कार्बोहाइड्रेट्स प्रोटीन एवं विटामिन आदि को प्राप्त करने के लिए विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं तथा इन सब पदार्थों का निर्माण प्रकाश संश्लेशण द्वारा ही होता है। रबड़, प्लास्टिक, तेल, सेल्यूलोज एवं कई औषधियाँ भी पौधों में प्रकाश संश्लेषण क्रिया में उत्पन्न होती हैं। हरे वृक्ष प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में कार्बन डाईऑक्साइड को लेते हैं और ऑक्सीजन को निकालते हैं, इस प्रकार वे वातावरण को शुद्ध करते हैं। ऑक्सीजन सभी जन्तुओं को साँस लेने के लिए अति आवश्यक है। पर्यावरण के संरक्षण के लिए भी इस क्रिया का बहुत महत्व है। मत्स्य–पालन के लिए भी प्रकाश संश्लेषण का बहुत महत्व है। जब प्रकाश संश्लेषण की क्रिया धीमी हो जाती है तो जल में कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा बढ़ जाती है। इसका 5 सी.सी. प्रति लीटर से अधिक होना मत्स्य पालन हेतु हानिकारक है। प्रकाश संश्लेषण जैव ईंधन बनाने में भी सहायक होता है। इसके द्वारा पौधे सौर ऊर्जा द्वारा जैव ईंधन का उत्पादन भी करते हैं। यह जैव ईंधन विभिन्न प्रक्रिया से गुजरते हुए विविध ऊर्जा स्रोतों का उत्पादन करता है। **उदाहरण के लिए–** पशुओं को चारा, जिसके बदले हमें गोबर प्राप्त होता है, कृषि अवशेष के द्वारा खाना पकाना आदि। मनुष्य के अतिरिक्त अन्य जीव जन्तुओं में भी प्रकाश संश्लेषण का बहुत महत्व है। मानव अपनी त्वचा में प्रकाश के द्वारा विटामिन डी का संश्लेषण करते हैं। विटामिन डी एक वसा में घुलनशील रसायन है, इसके संश्लेषण में पराबैंगनी किरणों का प्रयोग होता है। कुछ समुद्री घोंघे अपने आहार के माध्यम से शैवाल आदि पौधों को ग्रहण करते हैं तथा इनमें मौजूद क्लोरोप्लास्ट का प्रयोग प्रकाश–संश्लेषण के लिए करते हैं। प्रकाश संश्लेषण एवं श्वसन की क्रियाएं एक दूसरे की पूरक एवं विपरीत होती हैं। प्रकाश संश्लेषण में कार्बन डाइ ऑक्साइड और जल के बीच रासायनिक क्रिया के फलस्वरूप ग्लूकोज का निर्माण होता है तथा ऑक्सीजन मुक्त होती है।

मानव पाचन तन्त्र
HUMAN DIGESTIVE SYSTEM

प्रश्न 3– पाचन तन्त्र का वर्गीकरण कीजिए तथा पाचन तन्त्र के प्रमुख अंगों का सचित्र वर्णन कीजिए।

Give classification of digestive system? Describe the main parts of the digestive system with suitable diagrams.

या

निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–

Write a short note on following-

1) आहार नाल (Alimentary Canal)
2) पाचन ग्रन्थियाँ (Digestive Glands)
3) अमाशय (Stomach)
4) छोटी आँत (Small Intestine)

या

पाचन तन्त्र के प्रमुख कार्यों का वर्णन कीजिए।

Describe the main functions of digestive system.

उत्तर– पाचन तन्त्र (Digestive System)

भोजन सभी सजीवों की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है। इसी से सभी को कार्य करने के लिए ऊर्जा मिलती है। भोजन मानव की शारीरिक वृद्धि एवं विकास के लिए आवश्यक है। भोजन के प्रमुख अवयव कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एवं वसा है। अल्प मात्रा में विटामिन एवं खनिज लवणों की भी आवश्यकता होती है। भोजन से प्राप्त पोषक तत्व शरीर को स्वस्थ बनाने के साथ ऊतकों की मरम्मत एवं पुर्ननिर्माण भी करते हैं।

हमारा शरीर भोजन में उपलब्ध जैव रसायनों को उनके मूल रूप में उपयोग नहीं कर सकता। अतः पाचन तन्त्र में छोटे अणुओं में विभाजित कर साधारण पदार्थों में परिवर्तित किया जाता है। जटिल पोषक पदार्थों को अवशोषण योग्य सरल रूप में परिवर्तित करने की इसी क्रिया को पाचन कहते हैं तथा हमारा पाचन तन्त्र इसे यान्त्रिक एवं रासायनिक विधियों द्वारा सम्पन्न करता है। मनुष्य के पाचन तन्त्र को निम्नलिखित दो भागों में बाँटा गया हैं–

1) आहार नाल (Alimentary Canal)
2) पाचन ग्रन्थियाँ (Digestive Glands)

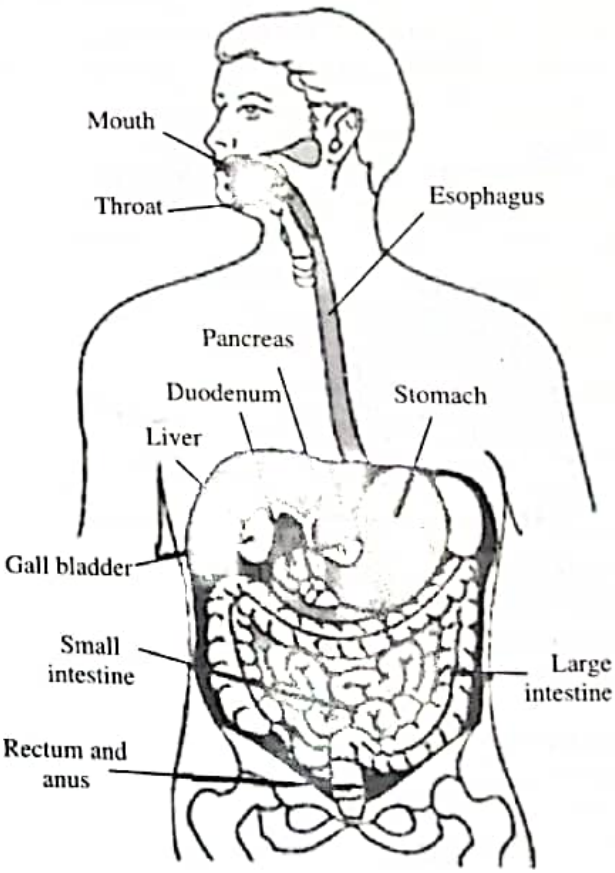

चित्र 2.2–पाचन तन्त्र

Scanned with OKEN Scanner

मनुष्य के पाचन तन्त्र के दो भागों को निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया गया है–

1) **आहार नाल (Alimentary Canal)**–आहार नाल मुख के अग्र भाग से प्रारम्भ होकर गुदा के पश्च द्वार तक होता है। इसके अन्तर्गत मुँह, ग्रसनी, ग्रासनली, अमाशय, छोटी आँत, बड़ी आँत, मलाशय, गुदानाल तथा मल द्वार आते हैं। मुख भोजन को ग्रहण करने, दाँत भोजन को चबाने, जीभ भोजन को उलटने–पलटने में सहायता करता है। मुँह से स्रावित लार भोजन में मिलकर भोजन को मुलायम एवं चिपचिपा बनाती है जो उसे निगलने में सरल बनाता है।

2) **पाचन ग्रन्थियाँ (Digestive Glands)**–पाचन ग्रन्थियों में प्रमुख रूप से लार ग्रन्थियाँ, अग्नाशयी ग्रन्थियाँ, यकृत एवं पित्त की थैली आदि आती हैं। इससे विभिन्न प्रकार के पाचक रस एवं एन्जाइम निकलते हैं तथा पाचन क्रिया में सहयोग प्रदान करते हैं। इस प्रकार पाचन क्रिया में निम्नलिखित चार क्रियाएँ होती हैं–
   i) **निगलना (Ingestion)**–मुख द्वारा भोजन निगला जाता है।
   ii) **पाचन (Digestion)**–भोजन में उपस्थित वसा, प्रोटीन एवं कार्बोज इस स्थिति में नहीं होते हैं कि शरीर में उनका अवशोषण वैसा का वैसा हो जाए इसके लिए भोजन के जटिल यौगिक सरलतम पदार्थों में टूटते हैं तभी उनका अवशोषण हो पाता है।
   iii) **अवशोषण (Absorption)**–आहार नाल के कुछ अंगों जैसे छोटी एवं बड़ी आँत की दीवारों से कुछ उभार जैसी संरचनाएँ उपस्थित होती हैं इन्हें अंकुर (Villi) कहते हैं। इन्हीं के द्वारा पचा हुआ भोजन अवशोषित होकर रक्त कोशिकाओं एवं लसिका कोशिकाओं तक पहुँचाता है। यहाँ से पचा हुआ भोजन रक्त संचरण के माध्यम से सभी अंगों तक पहुँचता है, इसी को अवशोषण कहते हैं।
   iv) **उत्सर्जन (Elimination)**–भोज्य पदार्थ जिनका पाचन एवं अवशोषण शरीर के अंगों द्वारा नहीं हो पाता। वे अपच भोज्य पदार्थ मल के रूप में बाहर निकाल दिए जाते हैं। इसी को उत्सर्जन कहते हैं।

पाचन तन्त्र के अंग (Organs of Digestive System)

पाचन क्रिया में निम्नलिखित प्रमुख अंग सम्मिलित हैं–

1) **मुँह (Mouth)**–मुँह पाचन तन्त्र का प्रारम्भिक भाग है। इसी के द्वारा भोजन ग्रासनली से होते हुए अमाशय में पहुँचता है। यह पाचन प्रणाली का प्रथम द्वार कहलाता है। मुख के भीतरी ऊपर वाले भाग को तालू कहते हैं। मुँह के नीचे वाले भाग में जीभ होती है, इन्हीं पर अनेक स्वाद कलियाँ होती हैं। इन्हीं के द्वारा भोजन का स्वाद पता चलता है।

2) **दाँत (Teeth)**–दाँत भोजन को कुतरने, तोड़ने एवं पीसने में सहायता करता है। दाँत ऊपरी जबड़ों तथा निचली जबड़ों में क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित होते हैं। अधोहन्वास्थियाँ (Mandible Bones) तथा ऊर्ध्वाहन्वास्थि (Maxillary Bone) मिलकर जबड़ों का निर्माण करती हैं।

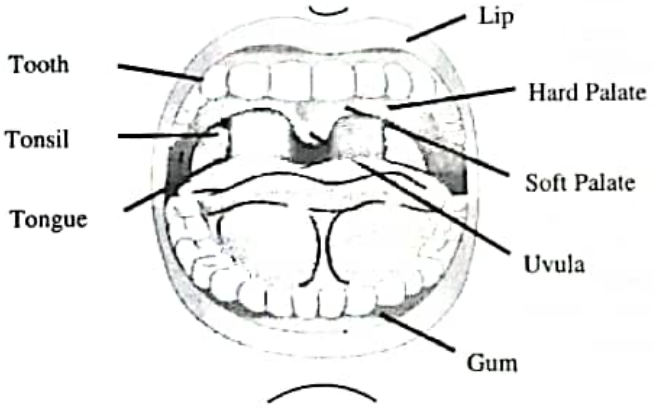

चित्र 2.3–मुँह और दाँत

3) **ग्रसनी (Pharynx)**–मुख नली के पीछे की ओर कीप आकार का चौड़ा भाग ग्रसनी कहलाता है। यह ग्रासनली तथा श्वसन तन्त्र इन दोनों के लिए समान मार्ग प्रदान करता है। चबाया हुआ भोजन तथा जल मुख के बाद ग्रसनी से होकर ग्रासनली में प्रवेश करता है। ग्रासनली के मुख्य तीन भाग होते हैं–
   i) नासा ग्रसनी (Nasopharynx)
   ii) मुख ग्रसनी (Oropharynx)
   iii) स्वरयन्त्र ग्रसनी (Laryngopharynx)

4) **जीभ (Tongue)**–जीभ के द्वारा स्वाद का ज्ञान होता है। जीभ काफी मोटी एवं मांसल होती है। इसमें कई प्रकार की स्वाद कलियाँ होती हैं जो विभिन्न प्रकार के स्वाद का अनुभव कराती है। जीभ मुख्यतः दो पेशी से बनी होती है– बाह्य पेशी एवं अन्तस्थ पेशी। बाह्य पेशी के द्वारा जीभ की गति तीव्र होती है तथा भोजन को निगला जाता है। अन्तस्थ पेशी जीभ में गति लाने का कार्य करती है।

5) **ग्रासनली (Esophagus)**–यह आँत मार्ग का प्रारम्भिक भाग है जो माँसपेशियों की बनी हुई अत्यन्त तंग एवं सकरी नली की तरह होती है। इसकी लम्बाई 20cm तथा व्यास 2cm होता है। यह मध्य स्थल में कशेरूका नाल के सामने तथा श्वासनी एवं हृदय के ठीक पीछे स्थित होती है। ऊपर से ग्रसनी से तथा नीचे से अमाशय से जुड़ा होता है। मुख द्वारा भोजन ग्रासनली द्वारा निगला जाता है। भोजन क्रमाकुंचन गति के कारण ग्रासनली से होते हुए अमाशय पहुँचता है।

Scanned with OKEN Scanner

6) **अमाशय (Stomach)**–पाचन क्रिया का प्रमुख अंग "अमाशय" होता है। ग्रासनली द्वारा निगला हुआ भोजन अमाशय में संग्रहित होता है। यह उदर गुहा में मध्यच्छदा पेशी तथा हृदय के नीचे बाँयी ओर स्थित रहता है। अमाशय की दीवारें मोटी व माँसल होती हैं। इसकी लम्बाई 26cm तथा चौड़ाई 10cm होता है। इसका आयतन 1200–1500 मिली. तथा क्षमता 1.5–3.0 लीटर तक होती है। अमाशय धीरे–धीरे खाली होता है तथा पेरट के रूप में भोजन पक्वाशय में पहुँचता है। पाचन, अवशोषण एवं ऐन्टीसेप्टिक का कार्य करता है।

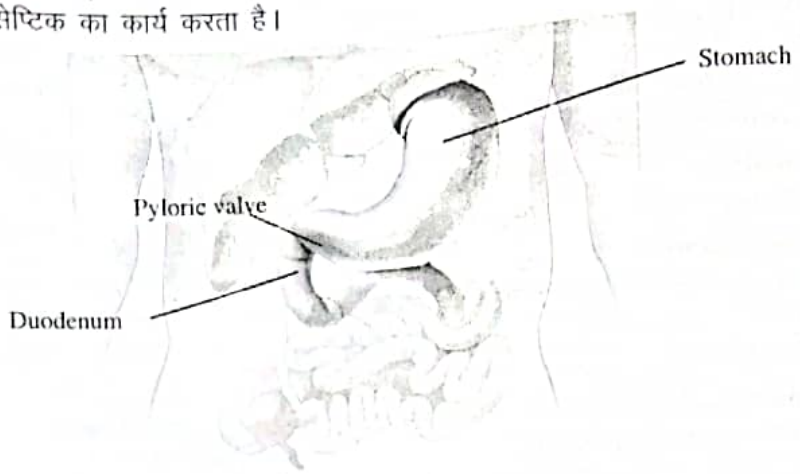

चित्र 2.4–अमाशय

7) **छोटी आँत (Small Intestine)**–छोटी आँत अमाशय के जठर निर्गम द्वार (Pyloric Sphincter) से प्रारम्भ होकर बड़ी आँत प्रारम्भिक भाग के समीप आकर समाप्त होती है। छोटी आँत की लम्बाई 6–7 मीटर तक होती है। यह उदर, गुहा के मध्य एवं निम्न भाग में कुंडली के रूप में स्थित होती है। छोटी आँत का पेशीय स्तर कई तरह की गतियाँ उत्पन्न करता है। इन गतियों से भोजन विभिन्न स्रावों से अच्छी तरह मिल जाता है और पाचन की क्रिया सरल हो जाती है। छोटी आँत के प्रमुख रूप से तीन भाग होते हैं

i) पक्वाशय (Duodenum), ii) मध्यान्त्र (Jejunum) एवं iii) शेषान्त्र (Ileum)।

पक्वाशय को ग्रहणी भी कहते हैं। यह छोटी आँत का प्रारम्भिक भाग होता है। अमाशय में जब भोजन आंशिक रूप से पच जाता है तो यह पतले द्रव के रूप में पक्वाशय में पहुँचता है। छोटी आँत का मध्य भाग मध्यान्त्र कहलाता है। इसका मुख्य कार्य पाचन एवं अवशोषण होता है। शेषान्त्र छोटी आँत का सबसे अन्तिम भाग है जो लगभग एक मीटर लम्बा होता है। इसमें प्रकार की पाचक ग्रन्थियाँ पाई जाती हैं। यह भोजन को आगे बड़ी आँत में प्रवेश पाने पर नियन्त्रण करता है साथ ही भोजन को विपरीत दिशा में आने से रोकता है।

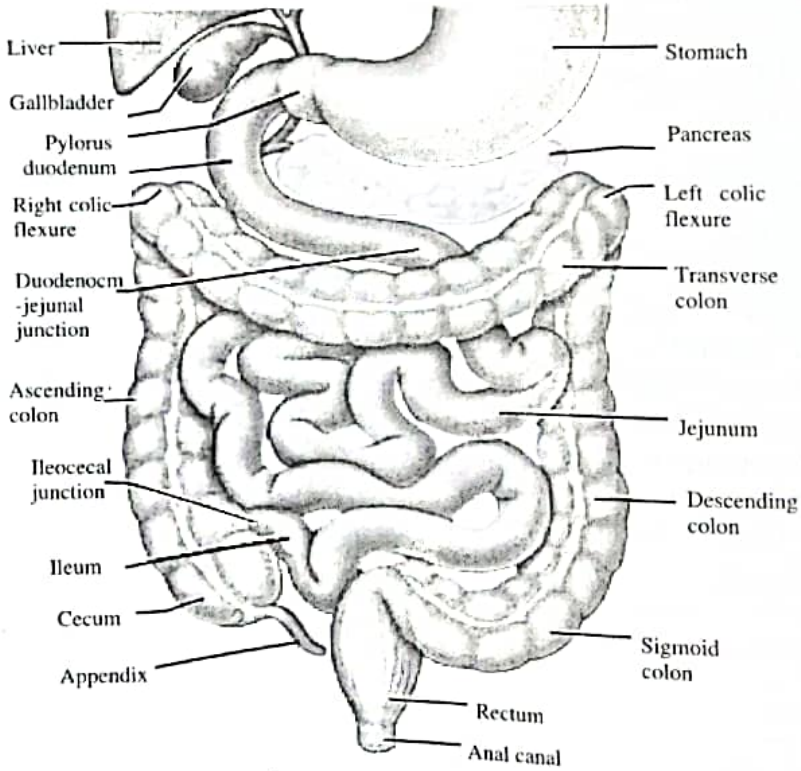

चित्र 2.5–छोटी आँत

Scanned with OKEN Scanner

8) **बड़ी आँत (Large Intestine)**–बड़ी आँत पाचन प्रणाली का अन्तिम भाग होता है। यह एक नली के समान होता है। इसका व्यास 6 सेमी तथा लम्बाई 150 सेमी होती है। यह छोटी आँत के अन्तिम भाग से आरम्भ होता है तथा मलाशय तक फैला होता है। यहाँ पर कोई पाचन क्रिया नहीं होती है। मात्र जल व खनिज लवणों का अवशोषण, अपचित भोजन रेक्टम में मलद्वार के द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है। छोटी आँत व बड़ी आँत का जोड़ सीकम कहलाता है। सीकम के आगे अंगूठेदार संरचना ऐपेन्डिक्स कहलाता है।

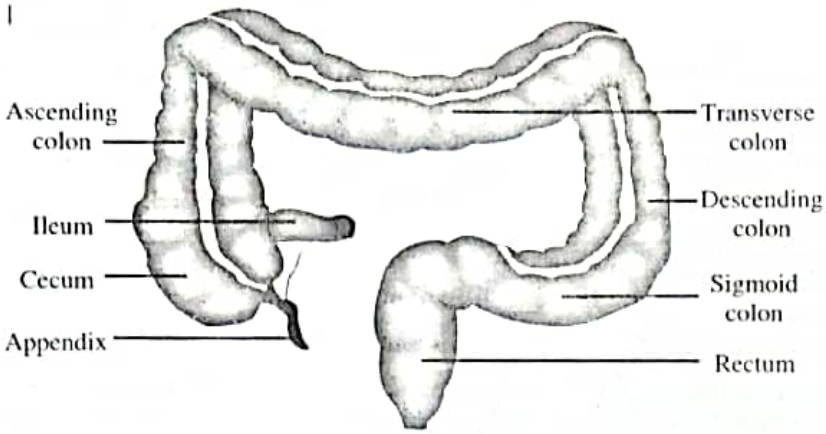

चित्र 2.6–बड़ी आँत

9) **अग्नाशय (Pancreas)**–अग्नाशय पीले रंग की एक ग्रन्थि होती है। यह लगभग 12 से 15 सेमी लम्बा एवं 4 सेमी चौड़ा होता है। यह उदर गुहा में ऊपरी मध्य से लेकर बाई ओर प्लीहा तक फैला रहता है। उदर में यह अमाशय के पीछे तक फैला रहता है। इसी से अग्नाशय रस निकलता है। इसमें पाचक एन्जाइम होते हैं जो भोजन को पचाने में सहायता करते हैं। भोजन को पचाने का मुख्य कार्य अग्नाशय का होता है। यह भोजन को पचाने के लिए हार्मोन तथा एन्जाइम का स्राव करता है। अग्नाशय ही ग्लूकागॉन और इन्सुलिन को रक्त के अन्दर छोडता है।

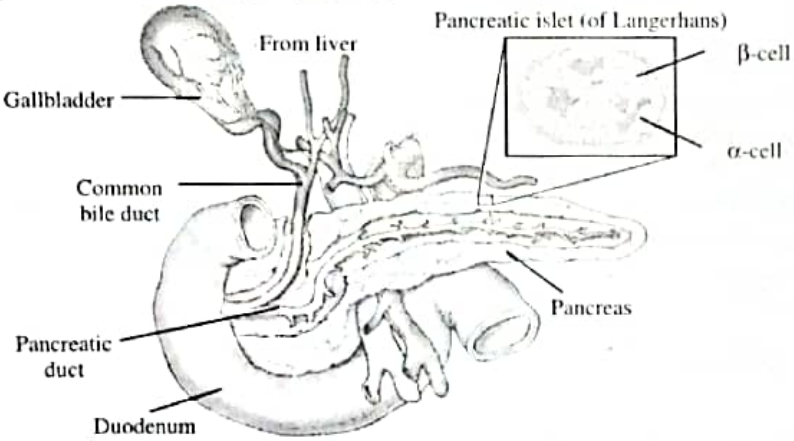

चित्र 2.7–अग्नाशय

10) **यकृत (Liver)**–शरीर की सबसे बड़ी ग्रन्थि यकृत है जो पित्त का निर्माण करती है। इसकी लम्बाई 17 सेमी तथा चौड़ाई 15 सेमी होती है। इसका भार शरीर के भाग का लगभग 1/50वां भाग होता है। यह प्रायः 1.5 से 2.0 किग्रा. तक होता है। बालकों में इसका भार शरीर के भार का 1/20 होता है। इसका बाहरी एवं अगला भाग चिकना होता है। इसका पश्च सतह का किनारा अनियमित होता है। इस प्रकार यह उदर भाग के समस्त चौड़ाई में फैला रहता है। यकृत मुख्यतः दो खण्डों बायाँ एवं दायाँ में विभक्त होता है। दायाँ खण्ड बाएँ खण्ड की तुलना में अधिक बड़ा होता है। यकृत पोषक तत्वों का संग्रहण, संश्लेषण, उत्सर्जन चयापचय (Metabolism) एवं स्त्रावण का कार्य करता है। चयापचय के दौरान अत्यधिक मात्रा में उष्मा का उत्पादन होता है जो रक्त के साथ मिलकर शरीर के विभिन्न अंगों में पहुँचकर उन्हें गर्मी प्रदान करती है।

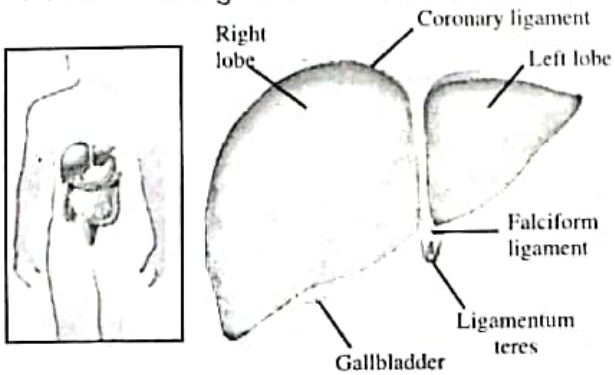

चित्र 2.8–यकृत

Scanned with OKEN Scanner

11) **प्लीहा (Spleen)**–प्लीहा एक चपटे नीले रंग की दीर्घाकार बड़ी ग्रन्थि है। यह उदर गुहा के ऊपरी बाएँ भाग के कोने में अमाशय तथा वक्षोदर मध्य पेशी के बीच स्थित रहता है। इसकी लम्बाई लगभग 5 इंच तथा चौड़ाई 3 इंच होती है। श्वेत रक्त कणिकाओं (WBC) का निर्माण प्लीहा में होता है तथा लाल रक्त कणिकाएँ (RBC) भी यहीं पर नष्ट होती हैं। प्लीहा रक्त का संचित भण्डार होता है तथा रक्त परिसंचरण के समय रक्त की मात्रा को नियन्त्रित करता है।

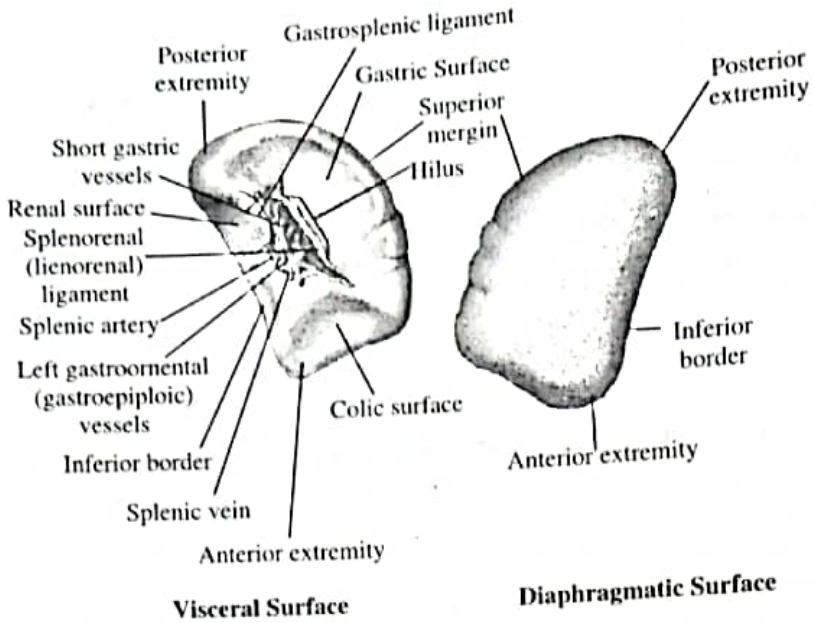

चित्र 2.9–प्लीहा

लार एवं लार ग्रन्थियाँ (Saliva and Salivary Glands)

लार का स्रावण लार ग्रन्थियों से होता है। यह तरल, पारदर्शी एवं चिपचिपा होता है। लार भोजन के साथ मिलकर भोज्य पदार्थ को गीला एवं मुलायम बनाता है जिससे भोजन निगलने में सरल हो जाता है। लार एन्टीसेप्टिक की तरह कार्य करता है तथा जीवाणुओं को अन्दर जाने से रोकता है। लार निर्जलीकरण की स्थिति में कम निकलता है तथा शरीर के तापक्रम नियमन एवं जल सन्तुलन में सहायता करता है।

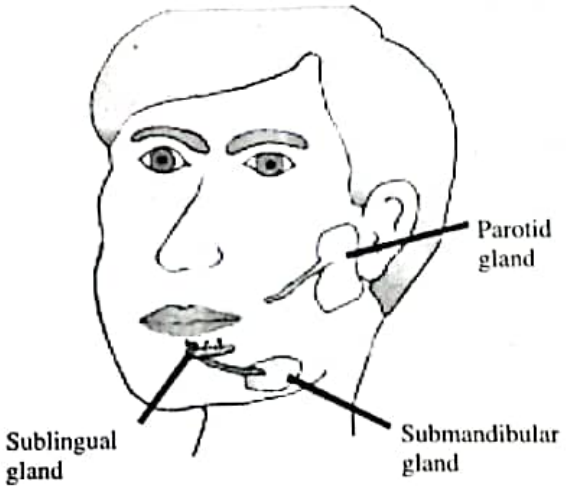

चित्र 2.10–लार एवं लार ग्रन्थियाँ

लार ग्रन्थियाँ (Salivary Glands)

लार का स्त्रावण तीन जोड़ी लार ग्रन्थियों के द्वारा होता है। ये लार ग्रन्थियाँ निम्नलिखित होती हैं–

1) **कर्णमूल ग्रन्थियाँ (Parotid Glands)**–सभी ग्रन्थियों में सबसे बड़ी लार ग्रन्थि होती है। इसकी लम्बाई लगभग 2 इंच होती है। यह कान के ठीक नीचे तथा जबड़े के कोण के पास स्थित होती है। इस ग्रन्थि से लार का 25% लार स्रावित होता है।

2) **हव्वाघर ग्रन्थियाँ (Submandibular Glands)**–हव्वाधार ग्रन्थि ग्रीवा में जबड़े के नीचे की तरफ दोनों ओर एक–एक की संख्या में उपस्थित रहती है। इससे जो स्राव निकलता है वह अधिक चिपचिपा होता है तथा इसमें प्रोटीन की सान्द्रता अधिक रहती है।

Scanned with OKEN Scanner

3) **जिव्हाधर ग्रन्थियाँ (Sublingual Glands)**–यह ग्रन्थि सबसे छोटी होती है। इनमें से 8 से 20 तक की वाहिकाएँ होती हैं जिनमें से अधिकांशतः मुँह में जीभ के नीचे खुलते हैं। इन लार ग्रन्थियों के अलावा भी कई छोटी–छोटी ग्रन्थियाँ होती हैं जो मुख गुहा में फैली रहती हैं।

पाचन तन्त्र के कार्य (Functions of Digestive System)

पाचन तन्त्र का प्रमुख कार्य खाए गए भोज्य पदार्थ को पचाना तथा अवशोषित करना है। पाचन तन्त्र के अन्तर्गत भोज्य पदार्थ छोटे–छोटे अणुओं में टूटकर शरीर द्वारा अवशोषित होती है तथा उनसे ऊर्जा प्राप्त होती है। पाचन तन्त्र के निम्नलिखित कार्य होते हैं–

1) पाचन तन्त्र के अन्तर्गत जीभ भोजन को मुलायम बनाती है तथा लार का उत्सर्जन कर उसे पचाने में सहायता करती है।
2) पाचन तन्त्र के अन्तर्गत भोजन का संग्रहण एवं जठर रस (Gastric Juice) का मिश्रण होता है, यह भोजन को पचाने का कार्य करता है।
3) पाचन तन्त्र भोजन के द्वारा प्राप्त ग्लूकोज, पानी, एल्कोहल एवं अन्य कई प्रकार के पदार्थों का अवशोषण होता है।
4) छोटी आँत पाचन कार्य के साथ–साथ अवशोषण, सुरक्षात्मक, हारमोनल एवं सक्रियात्मक कार्य भी करती है।
5) पाचन तन्त्र के द्वारा ही भारी धातु, शीशा, आर्सेनिक आदि का उत्सर्जन का कार्य करता है।
6) पाचन तन्त्र ही ग्लूकोज को ग्लाइकोजन में बदलता है तथा उसका अवशोषण करता है।
7) पाचन तन्त्र भोजन में उपस्थित वसा को पचाने में सहायता करता है तथा उसे अवशोषण के योग्य बनाता है।
8) पाचन तन्त्र के अन्तर्गत प्लीहा में श्वेत रक्त कणिकाओं का निर्माण होता है। यह रक्त की मात्रा को नियन्त्रित करता है।
9) पाचन तन्त्र में स्थिति विभिन्न ग्रन्थियाँ भोजन के पचाने से लेकर उसके उत्सर्जन से सम्बन्धित विभिन्न कार्य करती हैं।

खाद्य श्रृंखला (FOOD CHAIN)

प्रश्न 4– खाद्य श्रृंखला किसे कहते है? विभिन्न पारिस्थितिकी तन्त्रों की खाद्य श्रृंखलाओं का वर्णन कीजिए।
What is food chain? Describe the food chains of different ecosystems.

या

खाद्य श्रृंखला कितने प्रकार की होती है? पारिस्थितिकी तन्त्र में खाद्य श्रृंखला का क्या स्थान है? समझाइए।
How many types of food chain exists? What place does food chain occupies in ecosystem? Explain.

उत्तर– खाद्य श्रृंखला (Food Chain)

पारिस्थितिकी तन्त्र में जीवों की भोजन से सम्बन्धित श्रृंखला, जिसके एक सिरे पर उत्पादक व दूसरे सिरे पर सर्वोच्च उपभोक्ता होता है, भोजन या खाद्य श्रृंखला (Food Chain) कहलाती है। दूसरे शब्दों में किसी भी पारिस्थितिकी तन्त्र में सभी जीव आपस में खाद्य व्यवहार के आधार पर एक क्रमबद्ध श्रृंखला में जुड़े होते हैं। इस प्रकार क्रमशः किसी क्षेत्र में रहने वाले बड़े जीवों के द्वारा खाए जाने की क्रमबद्ध श्रृंखला को खाद्य श्रृंखला (Food Chain) कहते हैं।

उदाहरण के लिए– घास श्रृंखला का रेखाचित्र इस प्रकार है–

घास (उत्पादक) (Producer) → हिरण (शाकाहारी) (Herbivore) → शेर (मांसाहारी) (Carnivore)

उपरोक्त उदाहरण में एक घास स्थल पारिस्थितिकी तन्त्र में पौधों का पूरा समूह सूर्य की किरणों की सहायता से प्रकाश संश्लेषण द्वारा खाद्य बनाता है जिन्हें स्वपोषी या उत्पादक (Producers) कहा जाता है। इन पौधों को शाकाहारियों द्वारा खाया जाता है जिसको आगे प्राथमिक मांसाहारी खाते हैं। प्राथमिक मांसाहारियों को द्वितीयक मांसाहारी खाते हैं या उनसे उच्च स्तर के मांसाहारियों द्वारा खाया जाता है। इस प्रकार एक क्रमबद्ध श्रृंखला बनती है जिसे खाद्य श्रृंखला कहते हैं।

खाद्य श्रृंखलाओं के प्रकार (Types of Food Chain)

खाद्य श्रृंखला निम्न तीन प्रकार के होते हैं–

1) **चारण खाद्य श्रृंखला (Grazing Food Chain)**–जब खाद्य श्रृंखला हरे पौधों अर्थात् उत्पादकों से प्रारम्भ होकर सर्वोच्च उपभोक्ता पर पूरी होती है तो इसे चारण श्रृंखला कहते हैं। घास स्थल में हरे पौधे, खाद्य श्रृंखला का पहला स्तर बनाते हैं। ये पौधे शाकाहारियों **जैसे**– कीट, चूहे, चरने वाले पशुओं (Grazing Animals) का भोजन बनते हैं, जो अन्ततः मांसाहारियों द्वारा खाए जाते हैं। चराई खाद्य श्रृंखलाएँ सीधे तौर पर सूर्य की किरणों के पड़ने पर निर्भर करती हैं। हरे पौधे सूर्य की किरणों की सहायता से प्रकाश–संश्लेषण की विधि से खाद्य पदार्थ बनाते हैं। ये लम्बी खाद्य श्रृंखलाएँ होती हैं तथा सदैव अपघटनकारी जीवों (Decomposers) पर आकर समाप्त होती हैं।

2) **अपरद खाद्य श्रृंखला (Detritus Food Chain)**–मृत कार्बनिक तत्वों पर आधारित सूक्ष्म जीवों की खाद्य श्रृंखला को अपरद खाद्य श्रृंखला कहते हैं। अतः यह श्रृंखलाएँ सीधे सौर ऊर्जा पर निर्भर होती हैं। इन श्रृंखलाओं का आरम्भ बिन्दु अपघटित जैविक

Scanned with OKEN Scanner

पदार्थ हैं। यह अपरद पहले अपघटनकारी जीवों **जैसे**– बैक्टीरिया, कवक (Fungi) तथा प्रोटोजोआ का भोजन बनता है। इनको प्राथमिक उपभोक्ता (Primary Producers) कहा जाता है। इन जीवों को इसी कारण अपरद–पोषी जीव (Detritus Organisms) कहते हैं फिर अपरद–पोषी जीव कुछ शिकारी जीवों **जैसे**– कीट–लार्वा, निमैटोड (Nematodes) का भोजन बनते हैं। अपरदपोषी जीवों का मुख्य कार्य मृत जैविक पदार्थ को अपघटित करके अजैविक तत्वों को निकालकर, पारिस्थितिकी तन्त्र में संतुलन बनाए रखते है। अपरद श्रृंखलाएँ प्रायः चराई श्रृंखलाओं से छोटी होती हैं। मैंग्रोव (Mangrove) वन का एक अपरद खाद्य श्रृंखला का उदाहरण इस प्रकार है–

प्रथम स्तर (राइजोफोरा के गिरे हुए पत्ते) (Fallen Leaves of Rhizophora) → **द्वितीय स्तर** (बैक्टीरिया, कवक, प्रोटोजोआ) (Bacteria, Fungi, Protozoa) → **तृतीय स्तर** (कीट, लार्वा, केकड़े निमैटोड) (Insects, Larvae, Crabs, Nematodes) → **चतुर्थ स्तर** बड़े मांसाहारी जीव (मछली आदि) (Large Predators (fish, etc.)

3) **परजीवी खाद्य श्रृंखला (Parasitic Food Chain)**–हरे पौधों से आरम्भ होकर यह श्रृंखला बड़े जीवों से होती हुई छोटे जीवों (Micro organisms) पर पूर्ण हो जाती है। वन पारिस्थितिकी तन्त्र उपभोक्ताओं की तुलना में उत्पादक संख्या में कम पाए जाते हैं। यहाँ पर परजीवी खाद्य श्रृंखला (Parasitic Food Chain) भी पाई जाती है। उत्पादकों के स्तर पर मात्र एक बड़ा वृक्ष होता है। प्रथम स्तर के उपभोक्ता, फलों पर निर्भर शाकाहारी पक्षी होते हैं। इन पक्षियों पर परजीवी पाए जाते हैं जो द्वितीयक स्तर के उपभोक्ता हैं। तृतीय स्तर में परजीवी (Parasites) होते हैं। अतः इस खाद्य श्रृंखला की संरचना कुछ ऐसी होती है–

उत्पादक (Producer) वृक्ष (Tree) → **प्राथमिक उपभोक्ता (Primary Consumers)** विभिन्न पक्षी (Various Birds) → **द्वितीयक उपभोक्ता (Secondary Consumers)** पक्षियों के परजीवी (Parasites on Birds) → **तृतीयक उपभोक्ता (Tertiary Consumers)** परजीवी (Parasites)

पारिस्थितिकी तन्त्र में खाद्य श्रृंखला का स्थान (Place of Food Chain in Ecosystem)

हरे पौधे, सूर्य से प्राप्त सौर ऊर्जा को प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित कर देते हैं। यह रासायनिक ऊर्जा एडिनोसीन ट्राई फास्फेट (ATP) के रूप में पौधों में संग्रहित रहती है। हरे पौधे प्रथम पोषक स्तर पर रहने के कारण ही प्रथम उत्पादक कहलाते हैं। प्रथम उत्पादकों द्वारा संग्रहित ऊर्जा शाकाहारी जीवों द्वारा उपयोग में लायी जाती है। जो खाद्य श्रृंखला का द्वितीय पोषक स्तर (Second Trophic Level) बनाते हैं। ये प्रथम उपभोक्ता भी कहलाते हैं। ये प्रथम उपभोक्ता शाकाहारी जीव, मांसाहारी जीवों द्वारा भोजन के रूप में ग्रहण किए जाते हैं, ये मांसाहारी जीव द्वितीयक उपभोक्ता कहलाते हैं। द्वितीयक उपभोक्ता, तृतीय श्रेणी के मांसाहारी जीवों का भोजन बनते हैं। कुछ जीव सर्वाहारी होते हैं जो उत्पादक व उपभोक्ता दोनों का भोजन कर सकते हैं।

उदाहरण के लिए– सभी हरे पौधे, चाहे वे किसी भी प्रजाति से सम्बन्ध रखते हो, खाद्य श्रृंखला में एक ही वर्ग अर्थात् उत्पादक वर्ग के अन्तर्गत आते हैं तथा सौर ऊर्जा से रासायनिक ऊर्जा के परिवर्तक कहलाते हैं। प्रत्येक खाद्य श्रृंखला सदैव उत्पादक स्तर से ही प्रारम्भ होती है। विभिन्न पारिस्थितिकी तन्त्रों की खाद्य श्रृंखलाएँ इस प्रकार हैं–

1) **स्थल क्षेत्र की खाद्य श्रृंखलाएँ (Food Chains of Terrestrial Ecosystem)**

हरे पौधे (Green Plants) → खरगोश (Rabbit) → सांप (Snake) → बाज (Eagle)

घास (Grass) → टिड्डा (Grasshopper) → मेंढक (Frog) → सांप (Snake) → मोर (Peacock)

2) **जलीय क्षेत्र की खाद्य श्रृंखलाएँ (Food Chains of Aquatic Ecosystem)**– शैवाल (Algae) → प्रोटोजोआ (Protozoa) → छोटे जलीय कीट (Small Aquatic Insects) → बड़े जलीय कीट (Big Aquatic Insects) → छोटी मछली (Small Fish) → बड़ी मछली (Big Fish)

सबसे कम कड़ियों वाली खाद्य श्रृंखला मानव ऊर्जा सम्बन्धों के दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। जीव अपनी भोजन श्रृंखला के पदों को कम करके उपयोगी भोजन ऊर्जा (Food Energy) को बढ़ा सकता है।

Scanned with OKEN Scanner

घनी आबादी वाले देशों **जैसे**– चीन, भारत व बांग्लादेश के मनुष्य अधिकतर प्राथमिक उत्पादकों पर निर्भर हैं। इन देशों में खाद्य श्रृंखला छोटी होती हैं जिसके फलस्वरूप किसी दिए गए क्षेत्र की पैदावार अधिक आबादी के भोजन की पूर्ति कर सकती है।

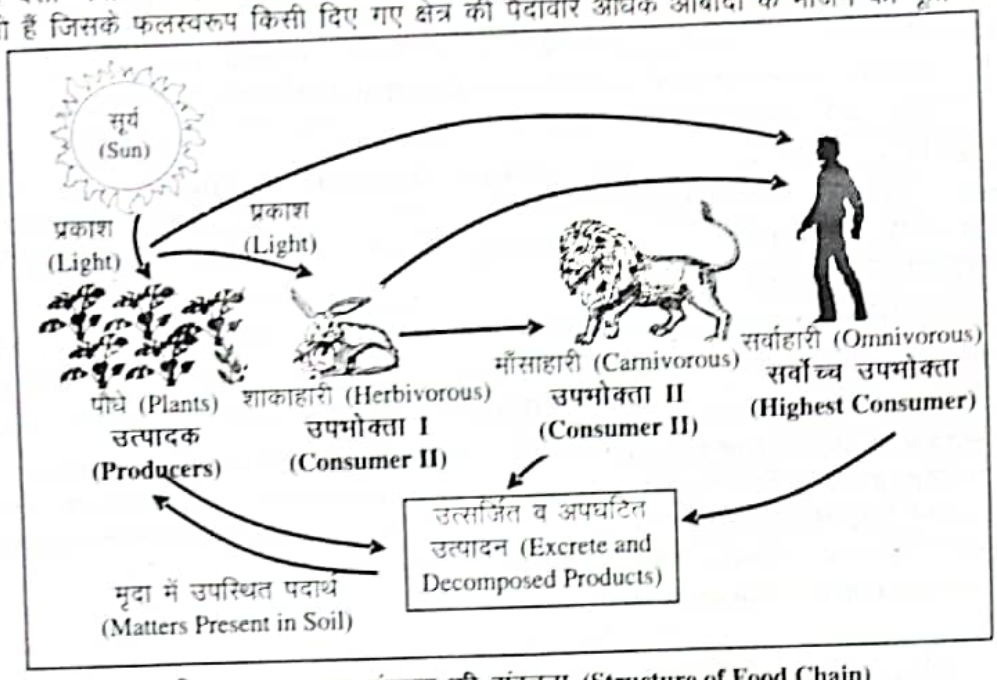

चित्र 2.11–खाद्य श्रृंखला की संरचना (Structure of Food Chain)

पारिस्थितिकी संतुलन (ECOLOGICAL BALANCE)

श्न 5– पारिस्थितिकी संतुलन का अर्थ बताइए तथा पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण किस प्रकार होता है? पष्ट कीजिए।

xplain meaning of ecological balance and how ecosystem is formed. Give an explanation.

त्तर– पारिस्थितिकी सन्तुलन विभिन्न पौधों और पशु प्रजातियों की संख्या सहित प्राकृतिक परिस्थितियों में एक लम्बे समय तक पनी संख्या को स्थाई रखना तथा सम्पूर्ण तंत्र एक संतुलित सिद्धान्त पर चलना ही इसका उद्देश्य है। सम्पूर्ण जीव संख्या में ापता होने, मृत्यु हो जाने, शिकार करने, पर्यावरण एवं प्राकृतिक आपदाओं के कारण कमी आती है अथवा कुछ जीव विलुप्त होने गते हैं। यह हमारे परिस्थितिकी सन्तुलन को प्रभावित करता है इसलिए इस संतुलन को बनाए रखना प्रत्येक जीव मनुष्य एवं कृति के लिए आवश्यक है। इसके असंतुलन से बहुत से दुष्परिणाम सामने आते हैं।

ारिस्थितिकी संतुलन का अर्थ (Meaning of Ecological Balance)

एक समाज में बहुत से कार्य होते हैं जो समाज को चलाने के लिए अपनी भूमिका का निर्वहन करते हैं। यदि किसी एक विभाग का कार्य बन्द होता है अथवा उसमें कमी आती है तो इससे सम्पूर्ण समाज प्रभावित होता है। ठीक इसी प्रकार पारिस्थितिकी तंत्र में प्रत्येक जीव की भूमिका इसे सुचारू रूप से चलाने में होती है यदि इस तन्त्र के एक भी जीव विलुप्त होते हैं अथवा उनकी प्रजाति नष्ट होती है तो यह तंत्र प्रभावित होता है। **उदाहरण के लिए**– चूहे, कीड़े इत्यादि, आबादी की फूल, पत्तों एवं जैव अपघटकों को संतुलित रखता है। यदि मांसाहारी जीवों की संख्या में वृद्धि होती है तो इस तंत्र में उपलब्ध शाकाहारी जीवों में कमी होगी तथा घास-फूस एवं अवांछित पौधों की संख्या में वृद्धि होगी। इस प्रकार जीवों की सभी प्रजाति पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन के लिए आवश्यक होता है। पारिस्थितिकी संतुलन पारिस्थितिकी तंत्र की स्थितरता को प्रदर्शित करने वाला शब्द है। जहाँ प्रजातियाँ अन्य प्रजातियों के साथ अपने वातावरण को संतुलन एवं स्थिरता बनाए रखता है। यहाँ तक कि यदि पारिस्थितिकी संतुलित है तो इसका यह अर्थ नहीं है कि पर्यावरण या तंत्र में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। एक आन्धी बहुत से पेड़ों एवं पौधों का नुकसान करती है। खुंखार शिकारी बहुत से जानवरों को शिकार करके मार सकता है तथा सूखा की स्थिति में विभिन्न संसाधनों एवं खाद्य पदार्थों की उपलब्धता कम हो सकता है। इन सभी कारणों से पारिस्थितिकी असंतुलित हो सकती है।

पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण (Preparation of Ecosystem)

पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण निम्नलिखित द्वारा किया जा सकता है–

1) **उत्पाद सम्बंधित पारिस्थितिकी सन्तुलन (Product Related Ecological Balance)**–किसी उत्पाद के जीवन चक्र के विकास का पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसका मूल्यांकन पारिस्थितिकी संतुलन द्वारा होता है। यह इसके मूल्यांकन का एक उपकरण होता है। कच्चे पदार्थों की निकासी, निर्माण एवं उपयोग के दौरान उसका पुर्नचक्रण, पुनः उपयोग एव उत्पाद का अन्तिम सम्भव प्रयोग करके इसको संतुलित किया जा सकता है।

   उत्पाद सम्बन्धी पारिस्थितिकी सन्तुलन के लिए जीवों एवं उत्पादों का सूचीबद्ध, पारदर्शी एवं पर्यावरणीय मूल्यांकन आवश्यक है। उत्पादन सम्बन्धी पारिस्थितिकी संतुलन को जीवन चक्र आंकलन के नाम से भी जाना जाता है।

Scanned with OKEN Scanner

2) **उत्पाद सम्बन्धित पारिस्थितिकी सन्तुलन को तैयार करने की रणनीति (Strategy for the Preparation of Product Related Ecological Balance)**–किसी भी उत्पाद पर उत्पाद सम्बन्धी मूल्यांकन पर्यावरण को प्रभावित करता है। पारिस्थितिकी सन्तुलन सम्बन्धित कच्चे मालों, उनके आवागमन एवं प्रक्रिया के दोहन को आच्छादित करता है। पारिस्थितिकी सन्तुलन एक मानकीकृत रणनीति नहीं है इसलिए इसे विभिन्न अध्ययनों से तुलना करने के उपरान्त ही प्रकाशित किया जाता है। आई.एस.ओ. (इन्टरनेशनल मानकीकरण संगठन) 1992 में प्रभावी हुआ।

3) **लक्ष्यों एवं कार्य क्षेत्र के परीक्षण को सुनिश्चित करना (Fixing the Targets and the Scope of Examination)**–पारिस्थितिकी सन्तुलन से सम्बन्धित उसकी संरचना, ढांचे, प्रारूप इत्यादि की परिभाषा तय करना तथा एक निश्चित लक्ष्य के लिए उसका परीक्षण करते रहना चाहिए। लक्ष्यों का विधिवत विवरण होना चाहिए जिससे उसका परीक्षण सरलता एवं पारदर्शिता से किया जा सके।

4) **तथ्यात्मक सन्तुलन (Factual Balance)**–तथ्यात्मक सन्तुलन पारिस्थितिकी सन्तुलन का केन्द्र है। तथात्मक सन्तुलन सभी पर्यावरण सम्बन्धी मात्रात्मक तथ्यों को इकट्ठा करता है। इसमें पर्यावरण सम्बन्धी सम्पूर्ण अदा एवं प्रदा चर सम्मिलित होते हैं। इन चरों में कच्चे माल, सहायक सामग्री, विद्युत ऊर्जा, थर्मल ऊर्जा, जीवाश्म ईंधन एवं ऊर्जा के प्राथमिक स्रोत होते हैं।

5) **प्रभावों का मूल्यांकन (Valuation of Effects)**–उत्पादों का मूल्यांकन उन्हें विभिन्न वर्गों में विभक्त करके किया जाता है। यह इस बात को प्रदर्शित करता है कि कौन से मद मानक के नीचे है अथवा कौन मद मानक से ऊपर हैं। इसके अनुसार पारिस्थितिकी सन्तुलन सम्बन्धी विभिन्न रणनीतियों का निर्माण किया जाता है। यह वैश्विक क्षेत्रीय एवं स्थानीय पर्यावरण प्रभावों को स्पष्ट करता है। इसको आगे निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जाता है–

i) **संसाधनों का उपयोग (Utilisation of Resources)**
   a) परिमित और पुनर्मौजी ऊर्जा संसाधन।
   b) परिमित एवं पुनः उत्पादित कच्चे माल।
   c) प्रभावी प्रकृति क्षेत्र।
   d) जल e) वायु

ii) **पारिस्थितिकी प्रभाव (Ecological Effects)**
   a) ग्रीन हाउस प्रभाव (हरित गृह प्रभाव)।
   b) समताप मण्डल का ओजोन प्रभाव।
   c) मिट्टी एवं पानी का अम्लीकरण।
   d) मिट्टी एवं पानी में पोषक तत्व (Eutrophication)।
   e) विषाक्त पदार्थों से पर्यावरण पर प्रभाव।
   f) जैव विविधता एवं पर्यावरण विविधता।

iii) **मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव (Effect on Human Health)**
   a) मानव स्वास्थ्य पर विषाक्त पदार्थों का हानिकारक प्रभाव।
   b) स्वास्थ्य के लिए हानिकारक प्रभाव।
   c) शोर

उपर्युक्त तथ्य पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी के महत्व, एवं उसके सन्तुलन को बनाने वाले कारकों को स्पष्ट करता है। इसके सन्तुलन के अभाव में सम्पूर्ण जैव सन्तुलन प्रभावित होता है तथा इसका दुष्परिणाम अत्यधिक भयानक होता है।

श्वसन तन्त्र (RESPIRATORY SYSTEM)

प्रश्न 6– श्वसन तन्त्र के प्रमुख अंगों का वर्गीकरण कीजिए तथा फेफड़े, श्वसन तन्त्र के कार्य एवं श्वसन प्रकिया का उल्लेख कीजिए।

Give classification of main organs of respiratory system and mention the functions of lungs, respiratory system and process of respiration.

या

श्वसन तन्त्र के प्रमुख कार्य लिखिए तथा श्वसन तन्त्र के प्रमुख अंगों का सचित्र वर्णन कीजिए।

Write the main function of respiratory system and describe main organs of respiratory system with diagram.

उत्तर– श्वसन तन्त्र (Respiratory System)

श्वसन, ऑक्सीजन को लेने तथा इसका प्रयोग करने तथा कार्बनडाइ ऑक्साइड के निष्कासन की प्रक्रिया है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य वातावरण से ऑक्सीजन को लेते हैं तथा कोशिकाओं में कुछ रासायनिक परिवर्तनों के परिणामस्वरुप उत्पन्न हुई कार्बन डाईआक्साइड को बाहर निकालते हैं। श्वसन शब्द अंग्रेजी भाषा 'Respiration' का ही हिन्दी रूपान्तर है जो लैटिन भाषा के शब्द 'Respirate' से बना है। Respirate का अर्थ है 'सांस लेना' (To Breath)। एक स्वस्थ वयस्क व्यक्ति प्रति मिनट 250ml ऑक्सीजन ग्रहण करता है तथा 200ml कार्बन–डाई ऑक्साइड छोड़ता है। इस प्रकार श्वसन के अन्तर्गत दो क्रियाएँ आती हैं–

1) निःश्वसन (Inspiration)
2) उच्छवसन (Expiration)

Scanned with OKEN Scanner

श्वसन क्रिया में जो अंग भाग लेते हैं उन अंगों को श्वसन अंग तथा इस तन्त्र को श्वसन तन्त्र (Respiratory System) कहते हैं। यह क्रिया जीवनपर्यन्त चलती है इसके रुकने के परिणामस्वरुप मनुष्य की मृत्यु हो जाती है। श्वसन क्रिया वास्तविक रूप से दोहरी क्रिया होती है।

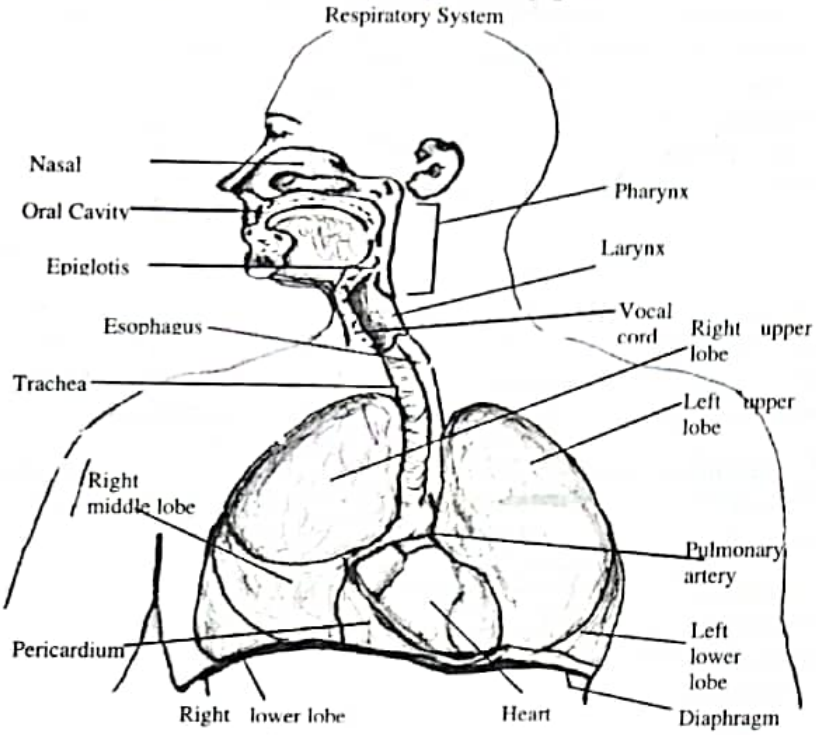

चित्र 2.12–श्वसन तन्त्र

ासन तन्त्र के अंग (Organs of Respiratory System)

ासन तन्त्र के अन्तर्गत निम्नलिखत अंगों का समावेश होता है–

नाक / नासिका (Nose/Nasal)–नाक पहला एवं सबसे महत्वपूर्ण श्वसन अंग है। इसमें एक बड़ी गुहा होती है जिसे नासिका गुहा कहा जाता है जो दो भागों में एक पट द्वारा विभाजित रहती है। नासिका गुहा के आगे (बाहर की ओर) तथा पीछे दो–दो छिद्र या रन्ध्र होते हैं। आगे के या वाह्य छिद्रों को नथुने अथवा अग्रज नासा रन्ध्र कहा जाता है जो बाहर से अन्दर की ओर हवा ले जाते हैं तथा पीछे की ओर जो छिद्र होते हैं, उन्हें पश्वाज नासा रन्ध्र कहा जाता है जो नासिका–गुहा से पीछे ग्रसनी में खुलते हैं। नासिका गुहा का ढाँचा अस्थियों एवं उपास्थियों से बना होता है। नासिका गुहा का ऊपरी भाग इथर्मयाद अस्थि की छिद्रित प्लेट जतुकाभ या स्फेनॉयड अस्थि ललाटिय या फ्रन्टल अस्थि तथा नासिका अस्थियों से बनी होती है। नाक के दो भाग होते हैं–

i) **बाहरी कवच (External Feature)**–यह अस्थियों तथा कार्टिलेज का बना हुआ तिकोना फ्रेम होता है। त्वचा इसको ऊपर से ढंके हुए होती है। नाक के अन्दर की तरफ दो नथुने होते हैं।

ii) **आन्तरिक गुहिकाएँ (Internal Cavities)**–ये दोनों गुहिकाएँ दो भागों में बँटी होती हैं। प्रत्येक गुहिका में छोटे–छोटे बहुत से बाल होते हैं जिन्हें हम Coarse Hair कहते हैं। ये बाल श्वास द्वारा हम जो ऑक्सीजन लेते हैं उसको छानकर आगे भेजते हैं जिससे धूल के कण अन्दर नहीं जा पाते।

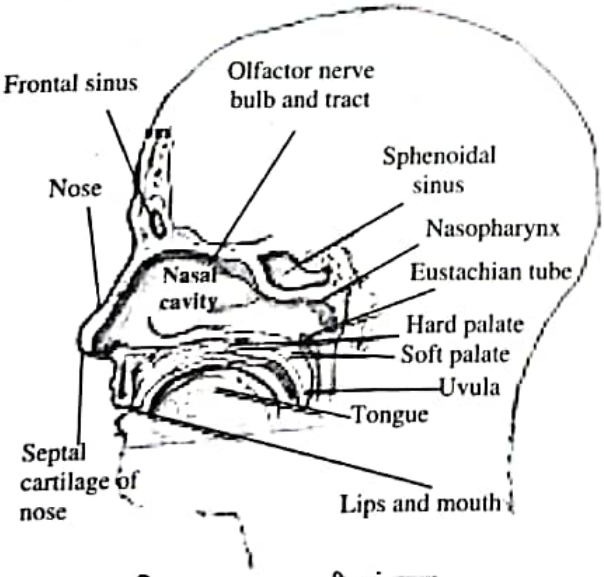

चित्र 2.13–नाक की संरचना

Scanned with OKEN Scanner

2) **ग्रासनिका (Pharynx)**–वायु के लिए नासा–गुहाओं के पीछे स्वरयन्त्र (Larynx) तक तथा भोजन के लिए मुख से ग्रासनली तक का पेशीकलामय मार्ग ग्रसनी (Pharynx) कहलाता है। ग्रसनी का ऊपरी भाग स्फीनाइड अस्थि के मुख्य भाग द्वारा बनता है तथा नीचे का भाग ईसोफेगस के साथ मिला रहता है। यह कपाल के आधार के समीप तथा नासिका गुहा, मुख–गुहा एवं स्वरयन्त्र के पीछे स्थित 12 से 14 सेमी लम्बी एक पेशीयनली होती है जिसका ऊपरी सिरा चौड़ा होता है। ग्रसनी के निम्नलिखित तीन भाग होते हैं–

i) **नासाग्रसनी (Nasopharynx)**–यह ग्रसनी का वह भाग है जो तालु की रेखा के ऊपर नासिका के पीछे स्थित रहता है। इसकी पिछली दीवार पर लिम्फॉइड ऊतक होते हैं। जिन्हें फैरिंजियल टॉन्सिल्स या एडिनॉइड्स कहा जाता है। कभी–कभी यह ऊतक बढ़कर ग्रसनी मे रूकावट पैदा कर देते हैं जिससे बच्चे मुंह से साँस लेने लगते हैं। श्रवण नलियाँ नासाग्रसनी की पाशवीर्य दीवारो मे खुलती हैं और इनमें से वायु मध्य कान तक पहुँचती है जो नाक के आन्तरिक के साथ मिली रहती है।

ii) **मुख ग्रसनी (Oropharynx)**–यह ग्रसनी का मुंह वाला भाग होता है जो कोमल तालु के स्तर के नीचे से आरम्भ होकर तीसरी ग्रीवा कशेरूका के काय के ऊपरी भाग के स्तर तक पहुँचता हैं। ग्रसनी की भित्तियां कोमल तालु में विलीन होकर प्रत्येक ओर दो भाग बना लेती हैं। मुख ग्रसनी की पार्श्वीय कोमल तालु के साथ मिली रहती है। इन भित्तियों के बीच, लसीक ऊतक के उभार रहते हैं जिन्हें पैलेटो–ग्लॉसल आर्चेज कहते हैं। इन्हें पैलेटाइन टॉन्सिल कहा जाता है।

iii) **स्वर यन्त्रज ग्रसनी (Laryngiopharynx)**–यह ग्रसनी की स्वरयन्त्र के पीछे वाला भाग होता है जो हाइड अस्थि के स्तर से स्वरयन्त्र के पीछे तक रहता है। ग्रसनी के इसी भाग से श्वासनीय एवं पाचन संस्थान अलग–अलग हो जाता है। आगे की ओर से वायु स्वरयन्त्र में जाती है तथा भोजन पीछे की ओर से इसोफेगस में जाता है।

2) **स्वर यन्त्र (Larynx)**–स्वरयन्त्र ग्रसनी के निचले भाग एवं श्वास–नली के बीच एक पेशी उपास्थिमय वायु मार्ग होता है। जिसमें स्वर रज्जु होते हैं यह स्वरयन्त्र ग्रसनी को श्वास–नली से जोड़ता है। यह जिह्वा (जीभ) के नीचे से श्वास–नली तक फैला होता है। वयस्क पुरूष में यह तीसरे, चौथे, पाँचवे एवं छठे सरवाइकल वर्टीबरा के सामने तथा बच्चों तथा वयस्क स्त्रियों में यह इससे ऊँचे स्थान पर स्थिर होता है। यौवन का प्रारम्भ होने पर पुरूषों में स्त्रियों की अपेक्षा स्वरयन्त्र अधिक तेजी से बढ़ता है।

3) **श्वास नली/श्वास प्रणाल (Trachea)**–इसे Wind pipe भी कहते हैं। यह एक बेलनाकार नली होता है। इसकी लम्बाई 10 सेमी होती है तथा इसका व्यास 2 से 2.5 सेमी होता है, इसका विस्तार लैरिंग्स से पंचम वक्ष कशेरूका तक होता है जहाँ यह दो श्वसनियों में विभक्त हो जाता है। इसमें 16–20 कार्टिलेज के अपूर्ण रिंग होते हैं। ये रिंग वलय पीछे की ओर अधूरे होते हैं जहाँ तन्तु ऊतक द्वारा रिंग के दोनों छोर जुड़े होते हैं। इस स्थिति में थोड़ा पेशी ऊतक भी होता है। दोनों श्वसनियों का सम्बन्ध अपनी–अपनी तरफ के फेफड़े से होता है। श्वास नली की दीवारें Hyaline cartilage से बनी होती है श्वास नली के मुँह पर एक वाल्व होता है जिसे Epiglottis कहते हैं। यह वाल्व भोजन को वायु नली में जाने से रोकता है।

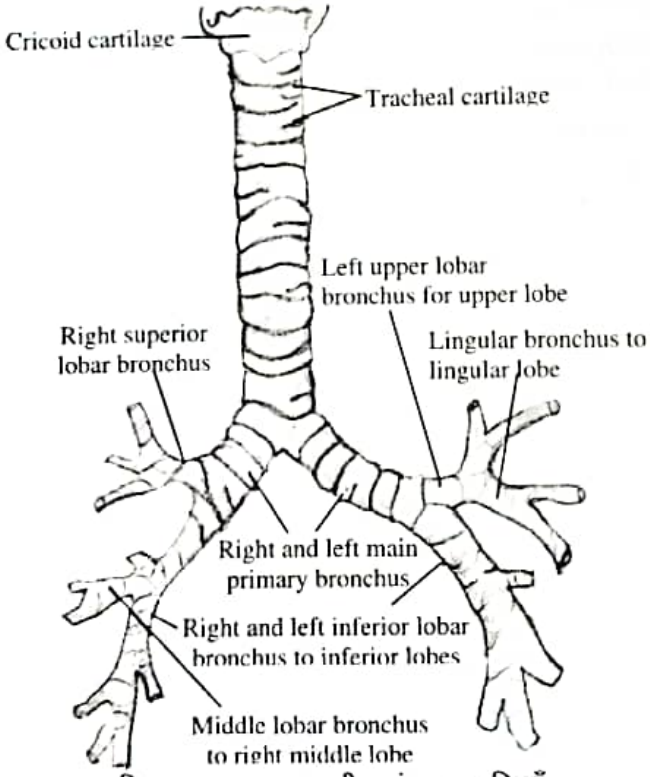

चित्र 2.14–श्वास नली एवं वायु नलियाँ

Scanned with OKEN Scanner

4) **वायुनलियाँ (Bronchi)**–दोनों वायु नलियाँ श्वास नली से थोड़ा अलग होती हैं। दाई ओर की वायु नली बाई ओर की वायु नली की अपेक्षा थोड़ी छोटी, चौड़ी और सीधी होती है। ये दाएँ और बाएँ फेफड़े तक पहुँचती हैं। उसके बाद बहुत सी छोटी–छोटी शाखाओं में बँट जाती हैं जिन्हें हम Bronchial Tube और Bronchious कहते हैं।

5) **डायाफ्राम (Diaphragm)**–डायाफ्राम आन्तरिक धारीदार माँसपेशियों की एक चादर होती है जो कि पसलियों की तली तक फैली हुई होती है। डायफ्राम वक्षीय गुहा (Thoracic cavity) अर्थात् हृदय, फेफड़ों तथा पसलियों को उदरीय खड्ढे या खोड़ से अलग करता है तथा श्वसन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जब यह संकुचित होता है तो वक्षीय खोड़ का आयतन बढ़ जाता है तथा फेफड़ों में वायु खींची जाती है।

6) **फेफड़े (Lungs)**–मानव शरीर में दो फेफड़े होते हैं। श्वास–प्रक्रिया में इन अंगों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। यह प्राणियों में एक जोड़े के रूप में उपस्थित होता है। फेफड़े की दीवार असंख्य गुहिकाओं की उपस्थिति के कारण स्पन्जी होती है। यह वक्ष गुहा में स्थित होता है तथा इसमें रक्त का शुद्धीकरण होता है। रक्त में ऑक्सीजन का मिश्रण होता है और फेफड़ो का मुख्य कार्य वातावरण से ऑक्सीजन लेकर उसे रक्त परिसंचरण में प्रवाहित करना और रक्त से कार्बन डाई ऑक्साइड को अवशोषित कर उसे वातावरण में छोड़ना है। गैसों का यह विनियम असंख्य छोटी–छोटी पतली दीवारों वाली वायु पुटिकाओं जिन्हें 'अल्वियोली' कहा जाता है, में होता है। यह शुद्ध रक्त पल्मोनरी धमनी द्वारा हृदय में पहुँचता है, जहाँ से यह फिर से विभिन्न अवयवों में पहुँचाया जाता है।

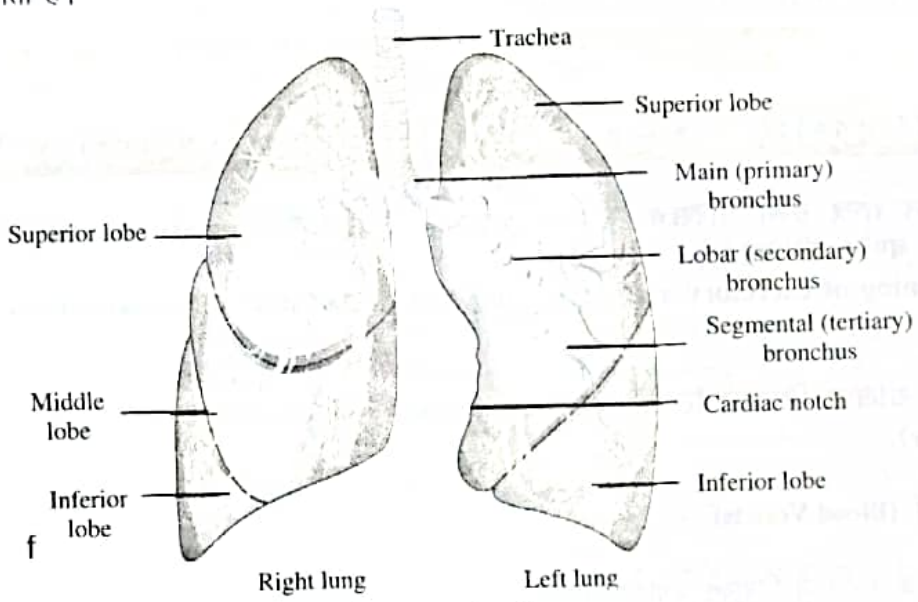

चित्र 2.15–फेफड़े

श्वसन तन्त्र के कार्य (Functions of Respiratory System)

श्वसन तन्त्र का महत्वपूर्ण कार्य शरीर की कोशिकाओं को निरन्तर रूप से ऑक्सीजन की आपूर्ति करना है। बिना ऑक्सीजन के मनुष्य जीवित नहीं रह सकता है क्योंकि यदि 4 मिनट से ज्यादा समय के लिए किसी मनुष्य में ऑक्सीजन की पूर्ति रोक दी जाए तो प्रायः मनुष्य की मृत्यु हो जाएगी। अतः जीवित रहने हेतु ऑक्सीजन की निरन्तर आपूर्ति होना अत्यन्त आवश्यक है।

श्वसन तन्त्र का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य शरीर से कार्बन डाई ऑक्साइड जलवाष्पों व अन्य व्यय पदार्थों को बाहर निकालना है। ये दोनों कार्य आन्तरिक तथा बाहरी श्वसन के माध्यम से किए जाते हैं।

श्वसन की प्रक्रिया (Mechanism of Respiration)

श्वसन की प्रक्रिया एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से फेफड़े ऑक्सीजन लेने हेतु फैलते हैं और उसके बाद वायु को बाहर की ओर निकालने हेतु सिकुड़ते हैं। श्वसन की इस पूरी प्रक्रिया में सिर, गर्दन, वक्ष, उदर आदि की सभी माँसपेशियाँ शामिल होती हैं। हालाँकि सामान्य श्वास में श्वसन की प्रमुख माँसपेशियाँ, पसलियों की माँसपेशियाँ व डायाफ्राम ही होते हैं। श्वसन की प्रक्रिया में श्वसन या श्वास लेना व श्वसन छोड़ना या निश्वसन शामिल होते हैं। जिनका वर्णन निम्नलिखित है–

1) **श्वास लेना (Inspiration or Inhalation)**–जब हम श्वास लेते हैं तो पसलियों के मध्य की मासँपेशियाँ छाती की गुहिक (Cavity) को फैलाने हेतु सक्रिय रूप से संकुचन करती हैं। पसलियाँ व उरोस्थि (Sternum) ऊपर तथा बाहर की ओर गति करती हैं। डायफ्राम भी संकुचित होता है तथा नीचे की ओर गति करता है एवं छाती की गहराई बढ़ती है। वक्ष की क्षमता भी बढ़ जाती है और फेफड़ों के मध्य दबाव कम हो जाता है। फेफड़े छाती की गुहिका को भरने हेतु फैलते हैं। वायुमण्डल के दबाव की अपेक्षा वायु कोशिकाओं में अब दबाव कम हो जाता है। अतः वायुमण्डल से वायु, वायु कोशिकाओं में खींच ली जाती है।

2) **निश्वसन या श्वास छोड़ना (Expiration or Exhalation)**–जब हम निश्वसन करते हैं अर्थात् श्वास छोड़ते हैं तो पसलियों की माँसपेशियाँ शिथिल (Relax) हो जाती हैं। पसलियाँ व उरोस्थि (Sternum) नीचे तथा अन्दर की ओर जाती हैं। डायाफ्राम ऊपर की ओर आता है। छाती की गहराई कम हो जाती है। वक्ष की क्षमता कम हो जाती है और दबाव बढ़ता है जो फेफड़ों की वायु को बाहर निकालने हेतु जोर लगाता है।

Scanned with OKEN Scanner

फेफड़े के कार्य (Functions of Lungs)

फेफड़े के कार्य निम्नलिखित हैं–

1) **बाहरी श्वसन क्रिया (External Respiration)**–जब हम श्वास लेते हैं तो ऑक्सीजन अन्दर जाती है। यह ऑक्सीज नाक के माध्यम से पहले श्वास नली में तथा फिर वायु नलियों में होते हुए वायु कोष्ठिकाओं तक पहुँचती है जहाँ फेफड़ों सम्बन्धी केशिकाओं में रक्त के साथ सम्पर्क होता है। रक्त और ऑक्सीजन के बीच मात्र एक पतली सी झिल्ली होती है। ऑक्सीजन इस झिल्ली में से गुजरती है तथा लाल रक्त कणिकाओं के Haemoglobin द्वारा समेट ली जाती है उसके बाद ऑक्सीजन से युक्त रक्त हृदय में चला जाता है जहाँ से यह रक्त शरीर के सभी अंगों में पहुँचाया जाता है ठीक इसी प्रकार से फेफड़ों में अशुद्ध रक्त में से CO_2 झिल्ली से गुजरती हुई वायु कोष्ठिकाओं में पहुँच जाती है। उसके बाद कार्बन डाई आक्साइड वायु नलियों से होती हुई श्वास नली में फिर उसके पश्चात नाक के माध्यम से बाहर निकाल जाती है।

2) **आन्तरिक श्वसन–क्रिया (Internal Respiration)**–आक्सीजन युक्त रक्त का सारे शरीर में परिसंचरण होता है यह रक्त ऊ में कोशिकाओं में पहुँचता है जहाँ इसकी गति अत्यन्त मन्द होती है। ऊतक केशिकाएँ इस रक्त से ऑक्सीजन को ग्रहण क लेती है तथा कार्बन डाई आक्साइड कोशिकाओं से रक्त में आ जाती हैं। इस प्रकार ऊतकों में ऑक्सीजन को देना और वहाँ CO_2 का रक्त से बाहर आ जाना आन्तरिक श्वसन क्रिया कहलाती है।

उत्सर्जन तन्त्र एवं परिसंचरण तन्त्र (EXCRETORY SYSTEM AND CIRCULATORY SYSTEM)

प्रश्न 7– उत्सर्जन तन्त्र तथा परिसंचरण तन्त्र की कार्यप्रणालियों का वर्णन कीजिए एवं परिसंचरण तन्त्र अंगों का सचित्र वर्णन कीजिए।

Discuss functioning of excretory and circulatory system and describe organs of circulatory system wi diagram.

या

निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए (Write short note on following):

1) **वृक्क (Kidney)**
2) **हृदय (Heart)**
3) **रक्त वाहिनियाँ (Blood Vessels)**

उत्तर–किसी जीव के शरीर से विषाक्त अपशिष्ट (Toxic Wastes) को बाहर निकालने की प्रक्रिया उत्सर्जन (Excretion) कहलाती है। कार्बन डाई ऑक्साइड और यूरिया मानव शरीर द्वारा उत्सर्जित किए जाने वाले प्रमुख अपशिष्ट है। कार्बन डाई ऑक्साइड श्वसन की प्रक्रिया से पैदा होता है और यूरिया यकृत (लीवर) में अप्रयुक्त प्रोटीनों के अपघटन से निर्मित होता है। मानव शरीर से इन बाहर निकालना अनिवार्य है क्योंकि इनका मानव शरीर मे संचित होना हानिकारक होता है और ये उन्हें नुकसान पहुँचा सकते है शरीर से अपशिष्ट बाहर निकालने के लिए अलग–अलग अंग होते हैं। ये अंग हैं– फेफड़े (Lungs) और वृक्क (Kidney)। हम फेफड़े (Lungs) कार्बन डाई–ऑक्साइड का और वृक्क (Kidney) यूरिया का उत्सर्जन करते हैं। इसलिए वृक्क (Kidney) मानव शरीर का मुख्य उत्सर्जक अंग है।

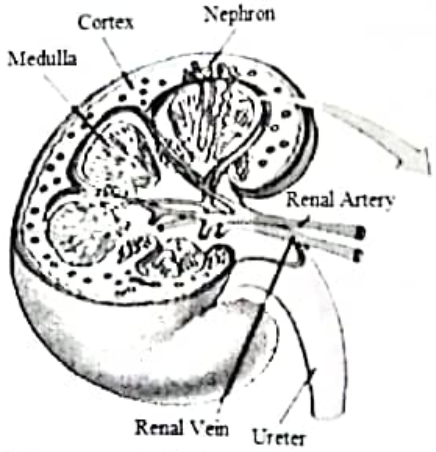

चित्र 2.16– उत्सर्जन तंत्र (Excretory System in Humans)

सबसे पहले हम देखेंगे कि फेफड़ों से किस प्रकार कार्बन डाई ऑक्साइड बाहर निकलती है श्वसन की प्रक्रिया के दौरान भोजन ऑक्सीकरण द्वारा शरीर में अपशिष्ट पदार्थ के रूप में कार्बन डाई–ऑक्साइड बनता है। प्रसरण (Diffusion) के द्वारा यह कार्ब

Scanned with OKEN Scanner

डाई–ऑक्साइड शरीर के ऊतकों में से रक्त प्रवाह में प्रवेश करता है। रक्त इस कार्बन डाई ऑक्साइड को फेफड़ों में ले जाता है। जब हम सांस बाहर की तरफ छोड़ते हैं, तब फेफड़े कार्बन डाई–ऑक्साइड का उत्सर्जन करते हैं जो नाक के माध्यम से वायु में मिल जाता है। मनुष्य का उत्सर्जन तन्त्र शरीर के तरल अपशिष्टों को एकत्र करता है ओर उन्हें बाहर निकालने में मदद करता है। इसमें निम्नलिखित मुख्य अंग होते हैं–दो वृक्क (Kidney), दो मूत्रवाहिनियाँ (Ureters), मूत्राशय (Bladder) और मूत्रमार्ग (Urethra)। वृक्क सेम के बीज के आकार वाले अंग हैं, जो मानव शरीर के पिछले भाग में कमर से थोड़ा ऊपर स्थित होते हैं। हर किसी मनुष्य में दो वृक्क होते हैं। हमारे वृक्कों में रक्त लगातार प्रवाहित होता रहता है।

वृक्क की धमनी (Renal Artery or Kidney Artery) वृक्क में अपशिष्ट पदार्थों से युक्त गन्दा रक्त लाती है। इसलिए, वृक्क का काम विषैले पदार्थ, **जैसे**– यूरिया व कुछ अन्य अपशिष्ट लवणों और रक्त में मौजूद अतिरिक्त जल का पीले तरल, जिसे मूत्र कहा जाता है, के रूप में उनका उत्सर्जन करना है। वृक्क द्वारा साफ किए गए रक्त को वृक्क शिरा (Renal Vein or Kidney Vein) ले कर जाती है।

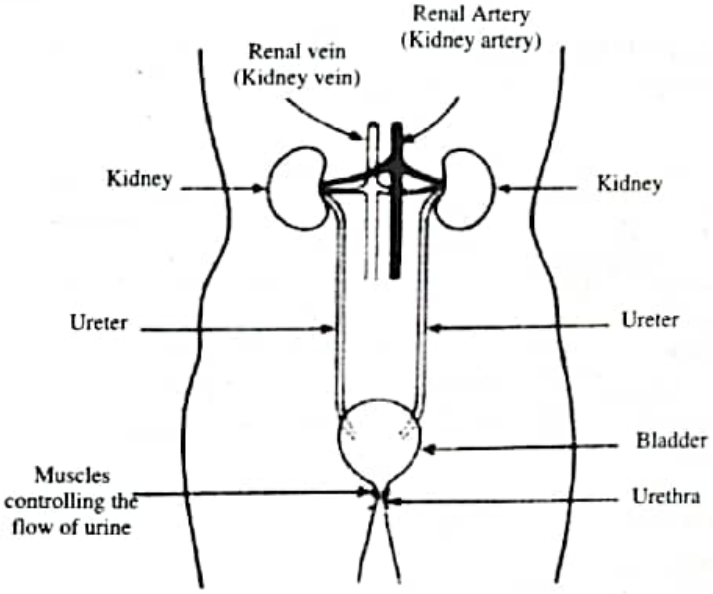

चित्र 2.17

प्रत्येक वृक्क से एक मूत्रवाहिनी मूत्राशय में खुलती है। मूत्रवाहिनियां वे नलियां होती हैं, जो मूत्र को वृक्क से मूत्राशय में लेकर जाती हैं। यहां मूत्र जमा होता है। मूत्राशय बड़ा होता है और हमारे शौचालय जाने तक मूत्र को जमा कर के रखता है। मूत्रमार्ग (Urethra) वाली नली, जो मूत्राशय से जुड़ी होती है, से मूत्र मानव शरीर से बाहर निकलता है।

वृक्क के कार्य

वृक्क की संरचना में दिखाया गया है कि प्रत्येक वृक्क अत्यधिक संख्या में उत्सर्जन इकाइयों, जिसे **नेफ्रॉन** कहते हैं, से बना होता है। नेफ्रॉन के ऊपरी हिस्से पर कप के आकार का थैला होता है, जिसे 'बोमैन्स कैप्सूल' (Bowman's Capsule) कहते हैं। बोमैन्स कैप्सूल के निचले हिस्से पर नली के आकार की छोटी नली (Tubule) होती है। ये दोनों मिलकर नेफ्रॉन बनाते हैं।

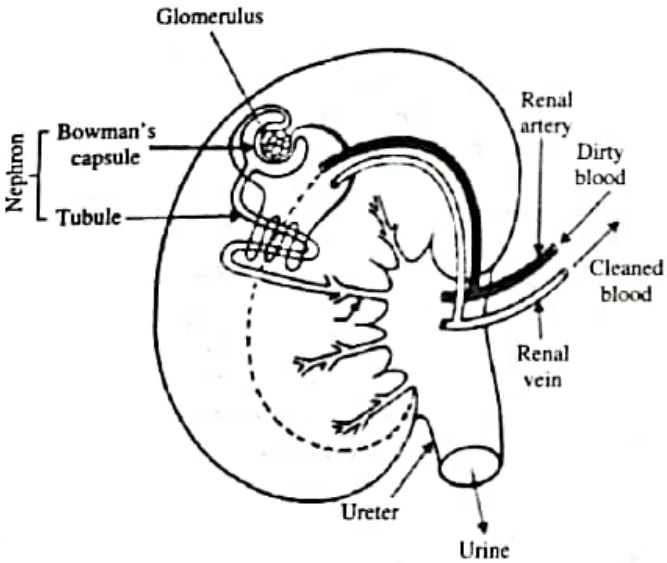

चित्र 2.18

Scanned with OKEN Scanner

नली का एक सिरा बोमेन्स कैप्सूल (Bowman's capsule) से जुड़ा होता है और दूसरा वृक्क की मूत्र–एकत्र करने वाली संग्रहण नलिका से जुड़ा होता है। बोमेन्स कैप्सूल (Bowman's Capsule) में रक्त कोशिका (Capillaries) का पुलिंदा होता है इसको **ग्लोमेरूल्स** (Glomerulus) कहते हैं। ग्लोमेरूल्स (Glomerulus) का एक सिरा वृक्क धमनी से जुड़ा होता है जो इसमें यूरिया अपशिष्ट युक्त गन्दा रक्त लाती है और दूसरा सिरा यूरिया मुक्त रक्त के लिए वृक्क शिरा (Renal Vein) के साथ जुड़ा होता है।

उत्सर्जन तन्त्र की कार्यप्रणाली (Functioning of Excretory System)

जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, कि यूरिया जैसे अपशिष्ट से युक्त गन्दा रक्त ग्लोमेरूल्स (Glomerulus) में प्रवेश करता है और यहाँ रक्त साफ होता है। निस्पंदन (Filtration) के दौरान रक्त में विद्यमान, ग्लूकोज, एमीनो एसिड, लवण, यूरिया और पानी आदि बोमैन्स कैप्सूल से गुजरता है और फिर नेफ्रॉन की छोटी नली (Tubule) में प्रवेश करता है। यहाँ उपयोगी पदार्थ छोटी नली (Tubule) के आस–पास वाली रक्त कोशिकाओं के माध्यम से रक्त में पुनः अवशोषित हो जाते हैं।

नेफ्रॉन की छोटी नली (Tubule) में बचा तरल पदार्थ मूत्र है। नेफ्रॉन इस मूत्र को वृक्क की संग्रहण नलिका (Collecting Duct of the kidney) में ले जाता है, जहाँ से यह मूत्रनली में ले जाई जाती है और यहाँ से ही मूत्र मूत्राशय में जाता है। कुछ समय के बाद मूत्र मूत्रमार्ग से शरीर के बाहर निकाल दिया जाता है।

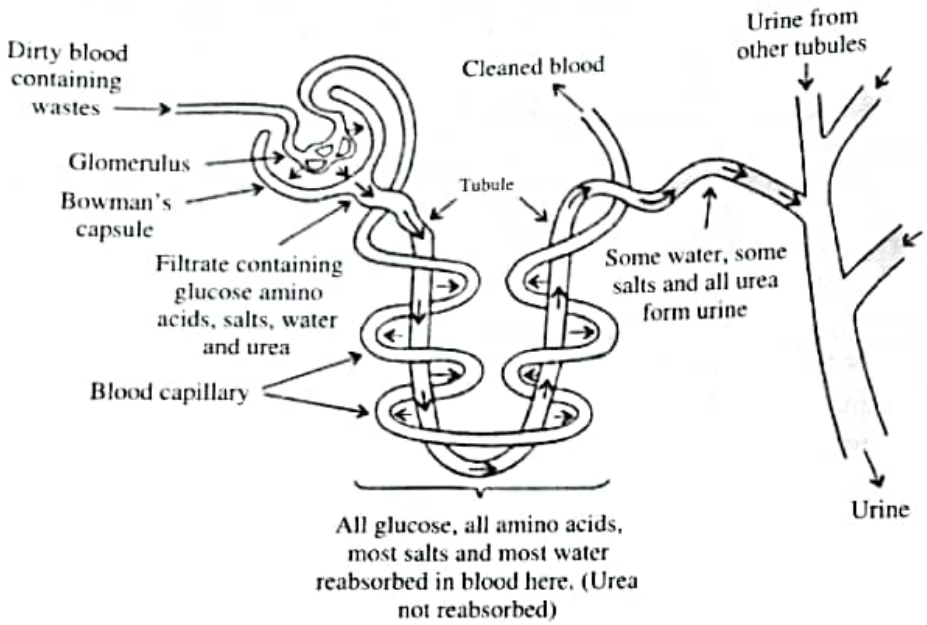

चित्र 2.19–उत्सर्जन तंत्र की कार्य प्रणाली

परिसंचरण तन्त्र (Circulatory System)

शरीर के रक्त परिसंचरण तन्त्र में रक्त, हृदय एवं रक्त वाहिनियों का समावेश होता है। हृदय की पम्पिंग क्रिया द्वारा रक्त धमनियों (Arteries) एवं धमनिकाओं से होता हुआ सम्पूर्ण शरीर की कोशिकाओं (Cells) में पहुँचता है तथा उनमें ऑक्सीजन (Oxygen) आहार (Food), पानी (Water) एवं अन्य सभी आवश्यक पदार्थ पहुँचाता है और वहाँ से अशुद्ध (Impure) रक्त केशिकाओं तथा शिराओं (Capillaries and Veins) से होता हुआ हृदय में वापस आ जाता है।

इस क्रिया को रक्त का परिसंचरण कहते हैं। परिसंचरण तन्त्र या वाहिकातन्त्र अंगों का वह समुच्चय है जो शरीर की कोशिकाओं के मध्य पोषक तत्वों का यातायात करता है।

मानव एवं अन्य कशेरूक प्राणियों के परिसंचरण तन्त्र 'बन्द परिसंचरण तन्त्र' होते हैं अर्थात् रक्त कभी भी धमनियों, शिराओं एवं कोशिकाओं के जाल से बाहर नहीं जाता है। अकशेरूकों के परिसंचरण तन्त्र 'खुले परिसंचरण तन्त्र' होते हैं। बहुत से प्राथमिक जीव (Primitive Animal) में परिसंचरण तन्त्र' होता ही नहीं है किन्तु सभी प्रणियों का लसीका तन्त्र (Lymphatic System) एक खुला तन्त्र होता है।

परिसंचरण तन्त्र का कार्य सम्पूर्ण शरीर के प्रत्येक भाग में रूधिर को पहुँचाना है, जिससे उसे पोषण और ऑक्सीजन प्राप्त हो सकें।

Scanned with OKEN Scanner

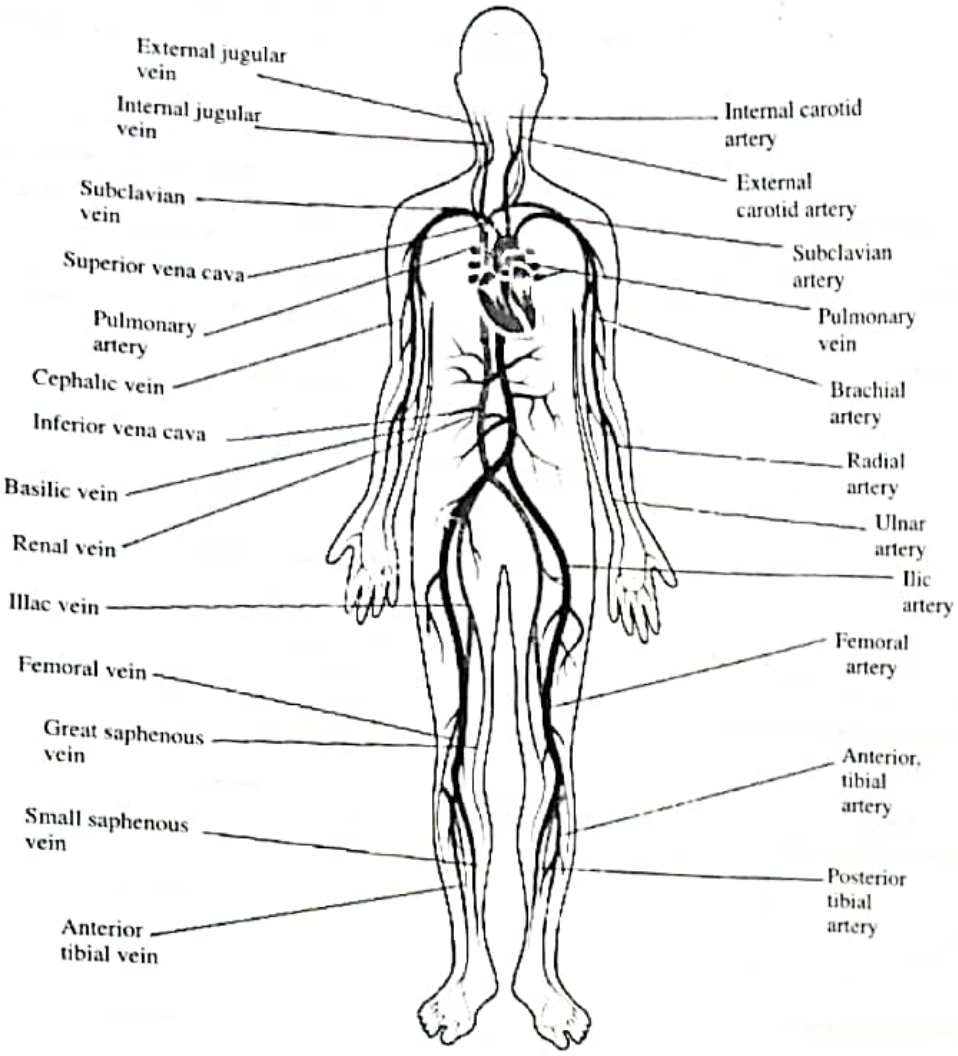

चित्र 2.20–परिसंचरण तन्त्र

परिसंचरण तन्त्र के अंग (Organs of Circulatory System)

परिसंचरण तन्त्र के अन्तर्गत निम्नलिखित अंग आते हैं–

1) हृदय (Heart)
2) रक्त वाहिनियाँ (Blood Vessels)

हृदय (Heart)

मानव हृदय लाल रंग का तिकोना, खोखला एवं मांसल अंग होता है जो पेशीय ऊतकों का बना होता है। यह एक आवरण द्वारा घिरा होता है जिसे हृदयावरण कहते हैं। इसमें पेरिकार्डियल द्रव भरा होता है जो हृदय को बाह्य आघातों से रक्षा करता है। हृदय पम्प की भाँति कार्य करता है। यह अन्दर के तापमान को बनाए रखने का तथा केशिकाओं को नियमित रूप से सन्तुलित आहार पहुँचाने का कार्य निरन्तर रूप से करता है। यदि हृदय अपना कार्य बन्द कर दे तो शरीर में लैक्टिक अम्ल, एसिड, फास्फेट, कार्बन डाई–ऑक्साइड आदि पदार्थों की मात्रा बढ़ने लगेगी जिसके फलस्वरूप केशिकाओं में जीवन समाप्त हो जाएगा तथा व्यक्ति की मृत्यु हो जाएगी। हृदय के अध्ययन को कार्डियोलॉजी कहते हैं। एक वयस्क मनुष्य का हृदय एक मिनट में 72 बार धड़कता है जबकि एक नवजात शिशु का 160 बार धड़कता है।

हृदय की बाह्य संरचना (External Structure of Heart)

मनुष्य का हृदय शंक्वाकार पेशीय अंग होता है। इसका ऊपरी भाग कुछ चौड़ा तथा निचला भाग कुछ नुकीला तथा बायीं ओर झुका हुआ होता है। हृदय के अगले चौड़े वाल्व को अलिन्द (Atrium) तथा पिछले नुकीले भाग को निलय (Ventricle) कहते हैं। दोनों भागों के मध्य अनुप्रस्थ विभाजन रेखा कोरोनरी त्वचा पाई जाती है।

हृदय की आन्तरिक संरचना (Internal Structure of Heart)

मनुष्य का हृदय चार कक्षीय होता है। अलिन्द में एक अन्तरालिन्द पर होता है जो अलिन्द को दाएँ तथा बाएँ अलिन्द में बाँट देता है। इस पर दाई ओर एक अण्डाकार भाग होता है जिसे फोसा ओवेलिस कहते हैं। दाएँ अलिन्द में पश्च महाशिरा तथा अग्र महाशिरा

Scanned with OKEN Scanner

के छिद्र होते हैं। पश्च महाशिरा के छिद्र पर यूस्टेकियन कपाट पाया जाता है। अग्र महाशिरा के छिद्र के समीप ही एक कोरोनरी साइनस होता है। इस छिद्र पर कोरोनरी कपाट या थिबेसियन कपाट पाया जाता है। बाएँ अलिन्द में दोनों फुफ्फुसीय शिराएँ एक सम्मिलित छिद्र द्वारा खुलती हैं।

निलय अन्तरा निलय पटल द्वारा दाएँ तथा बाएँ निलय में बँटा रहता है। निलय का पेशीय स्तर अलिन्द से अधिक मोटा होता है। दाएँ निलय से पल्मोनरी वाल्व निकलता है एवं बाँए निलय से कैराटिको सिस्टेमिक वाल्व निकलता है जो पूरे शरीर में शुद्ध रुधिर पहुँचता है। इन चापों के आधार पर तीन–तीन छोटे अर्द्ध चन्द्राकार कपाट लगे रहते हैं। अलिन्द निलय में अलिन्द निलय छिद्र खुलते हैं। इन छिद्रों पर अलिन्द निलय कपाट स्थित होते हैं। ये कपाट रूधिर को अलिन्द से निलय में जाने देते हैं किन्तु निलय से अलिन्द में नहीं। निलय की भित्ति तथा कपाटों में हृद रज्जु जुड़े रहते हैं। दाएँ अलिन्द व निलय के मध्य के अलिन्द–निलय में तीन वलन होते हैं। इन्हें त्रिवलनी कपाट कहते हैं। बाएँ अलिन्द व निलय के बीच के कपाट पर दो वलन होते हैं। अतः द्विवलन कपाट या मिट्रल कपाट कहते हैं।

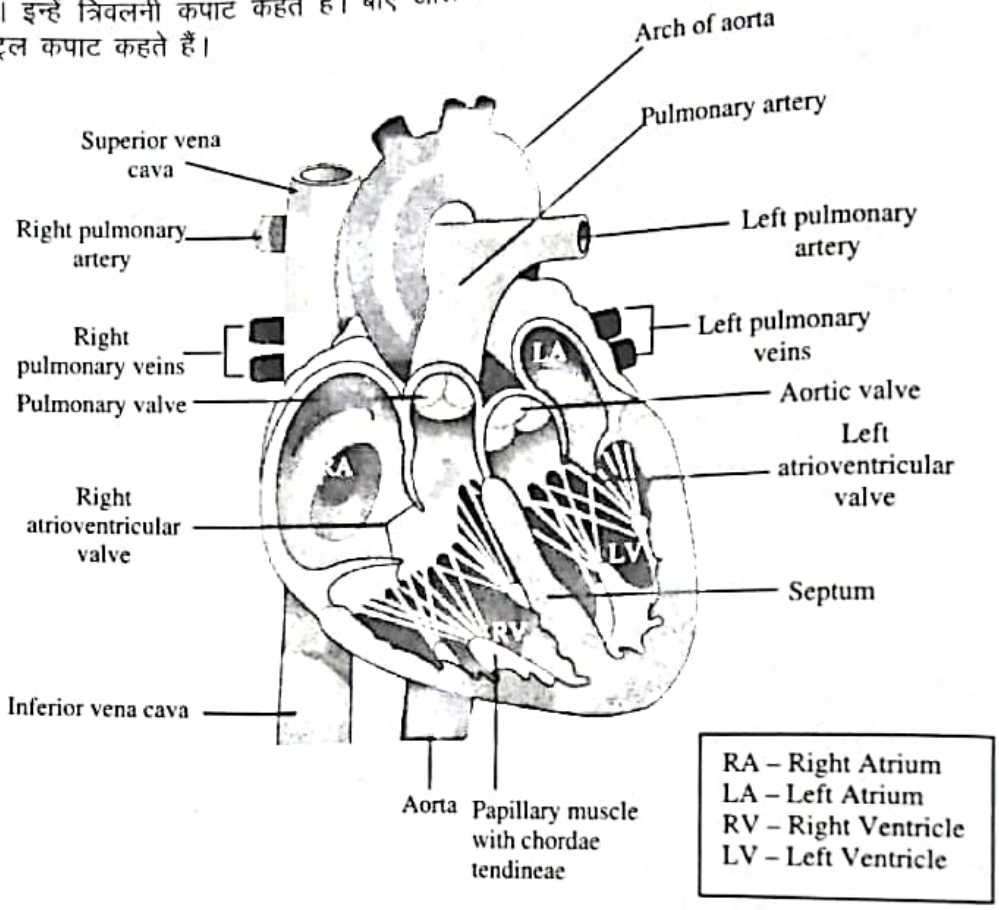

चित्र 2.21–हृदय

हृदय का कार्य (Functions of the Heart)

हमारे शरीर का रक्त प्रवाह मुख्यतः हृदय के ऊपर ही निर्भर करता है। रक्त का बाएँ निलय से धमनियों में फिर उसके केशिकाओं से वापस दाएँ अलिन्द में शिराओं के द्वारा आना सामान्य प्रवाह कहलाता है। रक्त का बाएँ निलय से फेफड़ों में फिर आलिन्द में आना फेफड़े सम्बन्धी प्रवाह कहलाता है। सामान्य प्रवाह में फेफड़े सम्बन्धी प्रवाह की अपेक्षा अधिक शक्ति होती है। हृदय का प्रमुख कार्य शरीर के विभिन्न भागों को रक्त पम्प करना है। यह कार्य अलिन्द व निलय के लयबद्ध रूप से संकुचन विश्रान्ती (सिकुड़ना व फैलना) से होता है। इस क्रिया में आक्सीकृत रक्त फुफ्फुस शिरा से बाँए अलिन्द में आता है वहाँ से निलय से होता हुआ महाधमनी द्वारा शरीर में प्रवाहित होता है।

शरीर से अशुद्ध या अनाक्सीकृत महाशिरा द्वारा दाएँ आलिन्द में आता है और दाएँ निलय में होता हुआ फुफ्फुस धमनी द्वारा फेफड़े में ऑक्सीकृत होने के लिए जाता है। यही क्रिया लगातार चलती रहती है।

रक्त वाहिनियाँ (Blood Vessels)

शरीर में रक्त परिसंचरण वाहिनियों के द्वारा होता है। जिन्हें रक्त वाहिनियाँ (Blood Vessels) कहते है। मानव शरीर में निम्न प्रकार की रक्त वाहिनियाँ होती हैं–

1) **धमनियाँ (Arteries)**–शुद्ध रक्त को हृदय से शरीर के अन्य अंगों तक ले जाने वाली वाहिनियाँ धमनी कहलाती है। इनमें रक्त तेजी व उच्च दाब पर होता है। इसका मुख्य कारण धमनियां का लचीला होना और माँसपेशियों की दीवारों का मोटा होना है। इनकी संरचना तथा उसकी मोटाई धमनी के आकार पर निर्भर करती है। अधिक फैलाव की शक्ति होने के कारण धमनियाँ इस योग्य

Scanned with OKEN Scanner

जाती है कि हृदय के संकुचन के परिणामस्वरूप रक्त की जो अतिरिक्त मात्रा धमनियों में आती हैं, वे उसको आराम से अपने अन्दर समाहित कर लेती हैं।

2) **शिराएँ (Veins)**–ये अंगों से रूधिर को वापस हृदय में लाती हैं। शिराओं की भित्ति महीन व पिचकने वाली होती है। शिराओं में अशुद्ध रूधिर बहता है तथा रूधिर बहुत दाब के साथ बहता है। शिराओं को भित्ति में पेशीय स्तर बहुत पतला होता है। इनकी गुहा काफी चौड़ी होती है तथा इसमें थोड़ी–थोड़ी दूर पर कपाट लगे होते हैं। ये अर्धचन्द्राकार कपाट रूधिर को एक दिशा में बहने देते हैं।

3) **केशिकाएँ (Capillaries)**–ये शिराओं और धमनियों को आपस में जोड़ती हैं। ऊतकों में पहुँचकर धमनियाँ महीन शाखाओं का जाल बनाती हैं जिन्हें केशिकाएँ कहते हैं। केशिकाओं की भित्ति केवल अन्तःस्तर (Endothelium) के एक स्तर की बनी होती है। केशिकाओं में रूधिर प्रवाह की गति बहुत धीमी होती है। केशिकाएँ आपस में मिलकर शिराएँ बनाती हैं। शिराएँ आपस में मिलकर शिरा बनाती हैं। केशिकाएँ निम्नलिखित तीन प्रकार की होती हैं–
   i) फेनेस्ट्रेरिड केशिकाएँ (Fenestrated Capillaries)
   ii) निरन्तर केशिकाएँ (Continuous Capillaries)
   iii) सिनसूसॉयडल केशिकाएँ (Sinsusoidal capillaries)

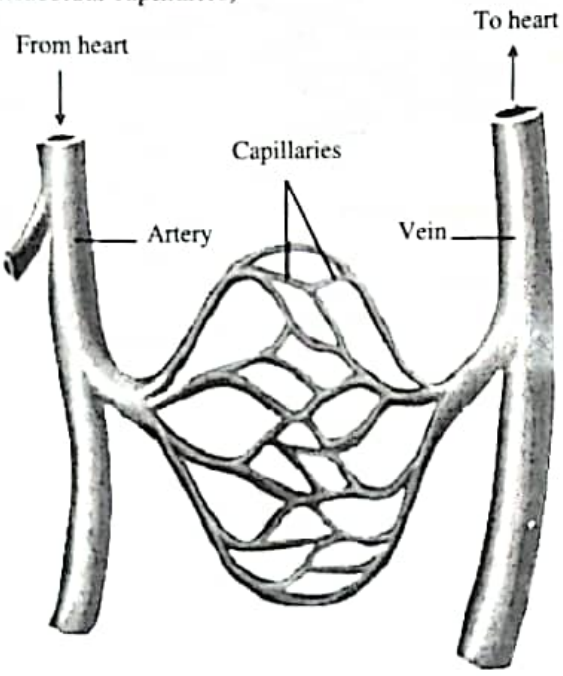

चित्र 2.22–धमनियाँ, शिराएँ एवं कोशिकाएँ

परिसंचरण तन्त्र का कार्य (Functions of Circulatory System)

हमारे शरीर में परिसंचरण तन्त्र के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

1) **खाद्य पदार्थों का परिवहन**–परिसंचरण तन्त्र आहारनाल में पचे हुए खाद्य पदार्थों को शरीर की विभिन्न कोशिकाओं तक पहुँचाता है।

2) **ऑक्सीजन का परिवहन**–यह तन्त्र ऑक्सीजन को फेफड़ों की वायु कूपिकाओं से ग्रहण करके शरीर की प्रत्येक कोशिका तक पहुँचाता है।

3) **कार्बन डाई–ऑक्साइड का परिवहन**–कोशिकीय श्वसन में उत्पन्न CO_2 को फेफड़ों तक परिवहन का कार्य परिसंचरण तन्त्र ही करता है।

4) **उत्सर्जी पदार्थों का परिवहन**–ऊतकों व कोशिकाओं में उपापचय के फलस्वरूप बने उत्सर्जी या अपशिष्ट पदार्थों के परिसंचरण तन्त्र के द्वारा ही उत्सर्जी अंगों (वृक्क) तक पहुँचाया जाता है।

5) **हार्मोन्स का परिवहन**–परिसंचरण तन्त्र हार्मोन्स को शरीर के विभिन्न भागों तक पहुँचाता है।

6) **शरीर के ताप का नियमन**–परिसंचरण तन्त्र शरीर के तापमान को स्थिर बनाए रखने का महत्वपूर्ण कार्य करता है।

7) **समस्थैतिकता बनाए रखना**–परिसंचरण जल तथा हाइड्रोजन आयनों (H+) एवं रासायनिक पदार्थों के वितरण द्वारा शरीर के सभी भागों में आन्तरिक समस्थैतिकता को बनाए रखता है।

8) **शरीर की रोगों से रक्षा करना**–परिसंचरण शरीर के प्रतिरक्षी तन्त्र का भी कार्य करता है। यह शरीर में प्रवेश करने वाले रोगाणुओं से शरीर की रक्षा करता है।

Scanned with OKEN Scanner

वंशानुक्रम एवं वातावरण
(HEREDITARY AND ENVIRONMENT)

प्रश्न 8– वंशानुक्रम एवं वातावरण को परिभाषित कीजिए। व्यक्ति के विकास को प्रभावित करने वाले वंशानुक्रम एवं पर्यावरणीय कारकों का उल्लेख कीजिए।
Define heredity and Environment. Describe heredity and environment related factors affecting individual development.

या

वंशानुक्रम एवं वातावरण से आप क्या समझते है? ये मानव विकास में किस प्रकार सहायक है?
What do you mean by heredity and environment. How it is helpful for human development?

या

समाजीकरण में वंशानुक्रम एवं वातावरण की सापेक्ष भूमिका बताइए।
Relative role of heredity and environment in socialisation

उत्तर– वंशानुक्रम (Heredity)
वंशानुक्रम का अर्थ है 'समान के समान' (like begets like) अर्थात् जैसे माता–पिता होते हैं उनकी संतान भी वैसी ही होती है। वंशानुक्रम की कुछ मुख्य परिभाषाएँ है जिनसे वंशानुक्रम का अर्थ अधिक स्पष्ट होता है, जो निम्नवत है–

मैकाइवर के अनुसार, "वंशानुक्रम एवं वातावरण परस्पर विरोधी न होकर एक दूसरे के पूरक होते हैं। वंशानुक्रम बालक को अनेक प्रकार की शक्तियों से विभूषित करता है और वातावरण उन शक्तियों के विकास में सहयोग देता है।"

जेम्स ड्रेवर के अनुसार, "माता–पिता की शारीरिक एवं मानसिक विशेषताओं का संतानों में संक्रमित होना ही वंशानुक्रम है।"

According to James Drever, "Heredity is the transmission from parents to offspring of physical and mental characteristics."

उपरोक्त कथनों से यह स्पष्ट होता है कि बालक शारीरिक रूप–गुण मे अपने माता–पिता के अनुरूप ही होते हैं इतना ही नहीं वे मानसिक तथा सामाजिक गुण भी अपने माता–पिता से प्राप्त करते हैं परन्तु कुछ अपवाद भी होते हैं इसका कारण पूर्वजो के गुणों का माता–पिता द्वारा हस्तान्तरण होता है।

वैयक्तिक विकास को प्रभावित करने वाले वंशानुक्रमीय कारक
वैयक्तिक विकास को प्रभावित करने वाले वंशानुक्रमीय कारक इस प्रकार है–

1) **शारीरिक विकास पर प्रभाव–डिक मेयर के अनुसार,** "वंशानुगत कारक जन्मगत विशेषताएँ होती है जो बालक के अन्दर जन्म से ही पायी जाती है। वैज्ञानिकों ने यह स्पष्ट किया है कि गर्भाधान के समय स्त्री–पुरुष के जिस प्रकार के शरीर सम्बन्धी पित्रैक (Genes) का संयोग होता है, बच्चे के शरीर के विविध अंगों का विकास उसके अनुसार ही होता है। पित्रैकों के माध्यम से ही शारीरिक रोग एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तान्तरित होते है। वैज्ञानिकों ने अपने अध्ययन के द्वारा यह स्पष्ट किया है कि गर्भस्थ बच्चे के विकास में अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ (Endocrine Glands) का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है।

2) **मानसिक विकास पर प्रभाव–क्लिनबर्ग** के अनुसार, "बुद्धि प्रजाति पर निर्भर करती है। वंशानुक्रम सम्बन्धी जितने भी प्रयोग किए गए है उनसे यह ज्ञात होता है कि बुद्धिमान माता–पिता के बच्चे भी बुद्धिमान होते हैं। कम–बुद्धि वाले माता–पिता के बच्चे भी कम बुद्धि के होते है।"

   अतः व्यक्ति के मानसिक विकास का आधार भी वंशानुक्रम होता है, परन्तु कभी–कभी इसके अपवाद भी होते है ऐसा इसलिए होता है कि बालक माता–पिता के अलावा अपने पूर्वजों से भी गुण हस्तान्तरित करता है।

3) **संवेगात्मक विकास पर प्रभाव**–किसी भी व्यक्ति की संवेगात्मक स्थिति उसके शरीर एवं मस्तिष्क पर निर्भर करती है इसलिए मनुष्य के संवेगात्मक विकास में भी वंशानुक्रम का प्रभाव होता है। संवेदी माता–पिता की संताने भी संवेदना के भाव से परिपूर्ण हाती है।

4) **सामाजिक विकास का प्रभाव**–व्यक्ति में सामूहिकता की मूल प्रवृत्ति का निवास होता है। यही प्रवृत्ति व्यक्ति को समूह में रहने की प्रेरणा देती है। इस प्रवृत्ति की तीव्रता जिस व्यक्ति में अधिक होती है वह उतनी ही तीव्रता से विविध प्रकार के समाजों में समायोजित हो जाता है। जिन परिवारों में सामाजिकता को महत्व दिया जाता है उन परिवारों के बच्चे सामाजिक क्रिया कलापों में भागीदारी करते है और सामाजिक नियमों एवं परम्पराओं का निर्वहन करते है।

5) **स्वभाव पर प्रभाव**–व्यक्ति का स्वभाव मुख्यतया उसके सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास पर निर्भर करता है। स्वभाव के विकास में सबसे अधिक भूमिका अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की होती है।

6) **चरित्र के विकास पर प्रभाव**–व्यक्ति का चारित्रिक विकास भी उसके वंशानुक्रम पर निर्भर करता है। इसका निष्कर्ष **डगडेल** ने चरित्रहीन ड्यूक के वंश के अध्ययन के आधार पर किया।

7) कैटिल ने अपने अध्ययन एवं प्रयोगों के आधार पर यह स्पष्ट किया कि, मनुष्य की व्यावसायिक योग्यता का विकास भी उसके वंशानुक्रम पर निर्भर करता है।

जैविक कारक (Biological Factor)
जैविक कारक से तात्पर्य ऐसे कारकों से होता है जो अनुवांशिक होते हैं तथा जो जन्म या जन्म के पहले से ही व्यक्ति में

Scanned with OKEN Scanner

विद्यमान होते हैं और व्यक्ति के विकास को प्रभावित करते हैं। मानव शरीर में होने वाली जैविक क्रियाओं के नियन्त्रण एवं समन्वय हेतु कुछ ग्रन्थियाँ स्राव करती हैं। ये ग्रन्थियाँ दो प्रकार की होती हैं–

1) **बहिस्रावी ग्रन्थियाँ (Exocrine Gland)**–ये नलिका युक्त ग्रन्थियाँ होती हैं और अपने स्राव को नलिका (Duct) द्वारा शरीर के बाहर निकाल देती है।

2) **अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ (Endocrine Gland)**–ये नलिकाविहीन ग्रन्थियाँ होती हैं और अपना स्राव सीधे रक्त में डालती है। वस्तुतः कभी–कभी हम बहुत सक्रिय (active) तथा कभी–कभी निष्क्रिय (passive) हो जाते हैं व कभी–कभी उदास (depressed) हो जाते हैं इसका कारण यह है कि शरीर में कुछ ऐसे रासायनिक परिवर्तन होते हैं जिनका नियन्त्रण कुछ ग्रन्थियों द्वारा होता है। उन ग्रंथियों का वर्णन निम्नलिखित हैं–

   i) **पीयूष ग्रन्थि (Pituitary Gland)**–इसका स्थान मस्तिष्क में होता है तथा अधिक हार्मोन्स (Hormones) स्रावित होने से व्यक्ति के शरीर की लम्बाई अधिक व कम होने से व्यक्ति बौना हो जाता है। इस ग्रन्थि के अग्रभाग से सोमेंटोट्रोकिन नामक हार्मोन्स स्रावित होता है। इस हार्मोन्स के सहारे पीयूष ग्रन्थि अन्य ग्रन्थियों जैसे– एड्रीनल ग्रन्थि, गल ग्रन्थि (thyroid) आदि के कार्यों पर अपना नियंत्रण रखती है।

   ii) **अधिवृक्क ग्रन्थि (Adrenal Gland)**–इस ग्रन्थि का स्थान वृक्क (kidney) के ऊपर होता है। इसके द्वारा ही व्यक्ति की सांवेगिक स्थिति का नियंत्रण होता है। भय, क्रोध, आदि संवेग में इस हार्मोन्स का अधिक महत्व है, इसलिए इसे आपातकालीन हार्मोन्स (Emergency Hormones) भी कहा जाता है।

   iii) **गलग्रन्थि (Thyroid Gland)**–गलग्रन्थि का व्यक्तित्व पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। इसके नष्ट हो जाने पर श्लेष्मकाय (Myxoedema) नामक रोग हो जाता है। इस रोग में व्यक्ति के शरीर में शिथिलता आ जाती है। मस्तिष्क एवं पेशियों की क्रिया मन्द पड़ जाती है, शरीर पर सूजन आ जाती है, स्मृति मन्द होने लगती है, ध्यान केन्द्रित नहीं हो पाता, चिन्तन करना कठिन हो जाता है। जन्म से ही इस ग्रन्थि के न होने पर बालक की बुद्धि का विकास नहीं हो पाता। आजाम्बुक बालक (Cretins), बौने, कुरूप और मूढ़बुद्धि (Imbecile) बालक इसी ग्रन्थि के प्रभाव का परिणाम हैं। इस ग्रन्थि के बहुत अधिक क्रियाशील होने पर व्यक्ति में तनाव, अशान्ति, चिड़चिड़ापन, चिन्ता और अस्थिरता दिखाई पड़ती है। वृद्धि के काल में गलग्रन्थि की क्रिया अधिक होने पर शारीरिक विकास, विशेषतया लम्बाई के विकास में अधिक तेजी दिखाई पड़ती है। इस प्रकार संक्षेप में, गलग्रन्थि की क्रिया की अधिकता और कमी के साथ–साथ शरीर की क्रिया में अधिकता और कमी दिखाई पड़ती है। यद्यपि अन्य प्रभावों के कारण भी शरीर में यही परिवर्तन देखा जा सकता है।

   iv) **यौन ग्रंथि (Sex Gland)**–इस ग्रंथि के विकास से स्त्रियों में स्त्रियोचित गुणों तथा पुरुषों में पुरुषोचित गुणों का विकास होता है।

वातावरण (Environment)

वे सभी भौतिक एवं अभौतिक वस्तुएँ जो मानव के सर्वांगीण विकास को प्रभावित करती है वातावरण कहलाती है। वातावरण से तात्पर्य बाह्य शक्तियों, परिस्थितियों एवं प्रभावों से है जो किसी भी मानव के विकास को जन्म के बाद प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते है। मनुष्य अपने वंशानुक्रम से जो भी गुण प्राप्त करता है वे सभी परिवर्तनशील होते हैं उन सब में पर्यावरण के अनुसार परिवर्तन होता है। वातावरण के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए मनोवैज्ञानिकों के द्वारा दी गई प्रमुख परिभाषाएँ इस प्रकार हैं–

वुडवर्थ के अनुसार, "अनुवंशिकता में भिन्न व्यक्ति समान नहीं होते हैं किन्तु समान वातावरण उन्हें समान बना देता है।"

टी.डी. इलिट के अनुसार, "किसी भी चेतन पदार्थ की इकाई के प्रभावशाली उद्दीपन एवं अन्तःक्रिया के क्षेत्र को वातावरण कहते हैं।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि मानव के चारों ओर का वातावरण अत्यधिक विस्तृत होता है जो उसे गर्भाधान के बाद से जीवनपर्यन्त प्रभावित करता है। वातावरणीय तत्वों से प्रभावित होकर ही मानव विकास होता है।

वाटसन के अनुसार, "मुझे नवजात शिशु दे दो, मैं उसे डॉक्टर, वकील, चोर या जो भी चाहूँ बना सकता हूँ।"

वातावरण व्यक्ति के अनुवांशिकता से प्राप्त गुणों के विकास में सहायक होता है। मनुष्य में वातावरण के अनुकूल गुणों का विकास होता है। इस प्रकार वातावरण मानव विकास की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। वातावरण जिन कारकों या तत्वों द्वारा व्यक्ति के विकास को प्रभावित करता है वे निम्नवत् हैं–

1) **मूलभूत आवश्यकताएँ**–मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताएँ रोटी, कपड़ा और मकान (Food, Cloth and Shelter) हैं ये सुविधाएँ व्यक्ति के विकास को प्रभावित करती हैं व्यक्ति के विकास के लिए ये सुविधाएँ जितनी उत्तम हो उसका विकास भी उतना ही उत्तम होगा।

2) **पारिवारिक परिवेश**–व्यक्ति के विकास को उसका पारिवारिक वातावरण/परिवेश विशेष रूप से प्रभावित करता है। आर्थिक रूप से सम्पन्न तथा सामाजिक रूप से प्रतिष्ठित परिवार में पलने वाले बालकों का विकास अच्छा होता है। परिवार में उन्हें स्वस्थ वातावरण प्राप्त होता है जिससे बालक का विकास प्रभावित होता है।

3) **रोग तथा दुर्घटना**–रोग, चोट या दुर्घटना के कारण बालक का शारीरिक एवं मानसिक विकास प्रभावित होता है। गम्भीर रोग में दी जाने वाली दवाओं के कुप्रभाव (Side effect) के कारण बालकों का विकास बाधित होता हैं।

4) **विद्यालय**–विद्यालय का वातावरण तथा विद्यालय से प्राप्त होने वाली सुविधाओं का प्रभाव बालक के विकास पर पड़ता है। जिन विद्यालयों में बालक के सर्वांगीण विकास हेतु समस्त साधनों, सुविधाओं एवं अवसरों की समुचित व्यवस्था होती है उनमें अध्ययनरत छात्रों का विकास अच्छी प्रकार होता है। विद्यालयों में अध्यापकों का व्यवहार बालक के विकास को मुख्य रूप से प्रभावित करता है। जिन विद्यालयों में शिक्षक स्नेहपूर्ण सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करते हैं तथा विद्यार्थियों

Scanned with OKEN Scanner

उनकी समस्याओं के समाधान हेतु निर्देशन एवं परामर्श देते हैं उन स्कूलों में पढने वाले विद्यार्थियों का विकास अच्छी प्रकार होता है।

5) **समाज एवं संस्कृति**–व्यक्ति का विकास समाज एवं संस्कृति द्वारा प्रभावित होता है। "मनुष्य सामाजिक प्राणी है" (Human is a social animal) समाज के दुःख सुख उसके अपने दुःख सुख हैं। उपरोक्त कथन इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि मनुष्य का व्यवहार, कार्य एवं भाव समाज द्वारा प्रभावित होता है। समाज के रीति रिवाजों, परम्पराओं, मान्यताओं एवं नैतिक मूल्यों द्वारा मानव के विकास का नियंत्रण एवं निर्धारण होता है।

शारीरिक कारक (Physical Factor)

यद्यपि आजकल व्यक्ति पर प्रभाव डालने वाले जैवकीय कारकों में अन्तः स्रावी ग्रन्थियों को ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है परन्तु जैवकीय कारकों के साथ शारीरिक रचना (physique) और शरीर रसायन (body chemistry) का वर्णन भी प्रासंगिक होता है। दैनिक व्यवहार में हम देखते हैं कि व्यक्ति की शारीरिक रचना से उसके स्वभाव का कुछ न कुछ सम्बन्ध अवश्य होता है। प्रायः मोटे व्यक्ति हँसी–मजाक पसन्द करने वाले, आरामपसन्द और सामाजिक दिखाई पड़ते हैं और दुबले–पतले व्यक्ति संयमी, तेज और चिड़चिड़े होते हैं।

शरीर रचना तथा स्वभाव के सम्बन्ध को समझने के लिए बहुत से प्रयोग किए गए हैं परन्तु इस विषय में स्पष्ट प्रमाण नही मिल सके हैं। वास्तव में शारीरिक रचना एवं व्यक्तित्व में निश्चित रूप से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए अभी और प्रयोगों की आवश्यकता है। अभी तक हुए अधिकांश प्रयोग विद्यालय के विद्यार्थियों पर किए गए हैं। अतः उनके परिणामों से निश्चित निष्कर्ष निकालने के पहले प्रौढ़ एवं वयस्क व्यक्तियों पर भी प्रयोग करने की आवश्यकता है। इसके बाद भी सह–सम्बन्ध (correlation) के आधार का प्रश्न रह जाता है। केवल सह–सम्बन्ध में शरीर रचना को विशेष प्रकार के स्वभाव का कारण नहीं माना जा सकता।

इस विषय में यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि एक व्यक्ति के दूसरे व्यक्ति के प्रति के व्यवहार में भी अन्तर पड़ता है। यह दैनिक अनुभव की बात है कि मोटे सुगठित शरीर वाले और दुबले–पतले व्यक्तियों के प्रति हमारे व्यवहार में उनके आकार–प्रकार के अनुसार भी अन्तर दिखाई पड़ता है। हमारे व्यवहार के इस अन्तर से भी उनके व्यक्तित्व में अन्तर आता है। अतः व्यक्तित्व के अन्तर को केवल शरीर के मोटे–पतले या बलिष्ठ–दुर्बल होने का कारण ही नहीं बल्कि दूसरों के उसके प्रति व्यवहार के कारण भी माना जाना चाहिए।

अन्य कारक (Other Factors)

बालक के विकास को प्रभावित करने वाले अन्य कारक निम्नलिखित हैं–

1) **बुद्धि (Intelligence)**–बालक के विकास को प्रभावित करने वाले कारकों में बुद्धि का महत्वपूर्ण स्थान है। बुद्धि का बालक के विकास पर अधिक एवं महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। कुशाग्र बुद्धि वाले बालकों का शारीरिक एवं मानसिक विकास तीव्र गति से होता है जबकि मन्द बुद्धि के बालकों का मानसिक विकास मन्द गति से होता है। मन्द बुद्धि के बालकों का शारीरिक विकास भले ही हो जाए किन्तु उनका सामाजिक, नैतिक, मानसिक एवं संवेगात्मक विकास की गति अत्यन्त धीमी रहती है। कुशाग्र बुद्धि के बालक शीघ्र ही चलना एवं बोलना सीख लेते हैं वहीं मन्द बुद्धि बालक देर से चलना व बोलना सीख पाते हैं।

   टर्मन ने अपने अध्ययन (जिसमें बालक के पहली बार बोलने और चलने का अध्ययन किया) के माध्यम से यह निष्कर्ष निकाला कि 13 वें मास में चलने वाले बालक प्रखर बुद्धि, 14 वें मास में चलने वाले सामान्य बुद्धि, 22 वें मास में चलने वाले मन्द बुद्धि और 23 वें मास में चलने वाले बालक मूढ़ होते हैं इसी प्रकार बोलने की प्रक्रिया में क्रमशः 11, 16, 34, 51 मास वाले बालक प्रखर बुद्धि, सामान्य, मन्द एवं मूढ़ बुद्धि वाले थे।

2) **लिंग भेद (Sex Difference)**–लिंग–भेद भी बालक के विकास को प्रभावित करने वाले कारकों में प्रभावशाली कारक हैं। इसका प्रभाव बालक के शारीरिक तथा मानसिक विकास पर पड़ता है। अध्ययन में यह देखा गया कि जन्म के समय बालक का आकार, बालिकाओं की अपेक्षा बड़ा होता है परन्तु बाद में बालिकाओं का शारीरिक विकास बालकों की अपेक्षा तीव्र गति से होता है। बालकों का मानसिक विकास, बालिकाओं की अपेक्षा देर से होता है। बालिकाओं में यौन–परिपक्वता भी बालकों की अपेक्षा जल्दी आती है।

3) **पोषण (Nutrition)**–बालक के विकास का एक अन्य प्रभावी कारक उचित पोषण है। पोषण का बालक के विकास पर पूरा–पूरा प्रभाव पड़ता है। उचित पोषण से बालक का शारीरिक एवं मानसिक विकास उचित ढंग से होता है। बालक के लिए सिर्फ भोजन ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उस भोजन में उचित सन्तुलित पोषण का होना भी अनिवार्य है। सन्तुलित पोषण तत्वों को ग्रहण करने से बालक शारीरिक रूप से सुदृढ़ होते हैं और मानसिक रूप से भी उनका विकास उचित रूप से होता है।

4) **शुद्ध जल, वायु एवं प्रकाश (Pure Water, Air and Light)**–शुद्ध जल, वायु एवं प्रकाश भी बालक विकास के महत्वपूर्ण कारक हैं। जीवन के आरम्भिक दिनों में बालक को शुद्ध वायु तथा प्रकाश (धूप) की नितान्त आवश्यकता होती है। शुद्ध जल, वायु एवं प्रकाश के अभाव में जीवन की कल्पना करना भी मुश्किल है। इससे उनका शारीरिक एवं मानसिक विकास अवरुद्ध हो जाता है।

5) **प्रजाति (Race)**–प्रजाति भी बालक के विकास को प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। **क्लिनबर्ग** का मत है कि बुद्धि की श्रेष्ठता का कारण प्रजाति है। यही कारण है कि अमेरिका की श्वेत प्रजाति, नीग्रो प्रजाति से श्रेष्ठ है। अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि यूरोप की तुलना में भूमध्यसागरीय प्रदेशों के बालकों का शारीरिक विकास तीव्र गति से होता है।

6) **आर्थिक स्थिति (Economic Condition)**–बालक विकास का अन्य प्रभावशाली कारक परिवार की आर्थिक स्थिति भी है। सम्पन्न परिवार के बालक मानसिक रूप से पूर्णतः सन्तुष्ट रहते हैं जिस कारण उनका समुचित शारीरिक एवं मानसिक विकास होता है। इसके ठीक विपरीत आर्थिक रूप से कमजोर बालक स्वयं से असन्तुष्ट रहते हैं और उनके मानसिक एवं शारीरिक विकास की गति धीमी रहती है।

Scanned with OKEN Scanner